श्री दुर्गा सप्तशती

डॉ. शेष नारायण वाजपेयी



श्री दुर्गा सप्तशती

(दोहा-चौपाई, अर्थ तथा पाठ विधि सहित)



लेखक

डॉ. शेष नारायण वाजपेयी

व्याकरणाचार्य (एम. ए.),

ज्योतिषाचार्य (एम.ए.), पत्रकारिता पी.जी.डी.

एम.ए. पी-एच.डी. हिन्दी एवं ज्योतिष

काशी हिंदू विश्वविद्यालय (बी.एच.यू.)

राजेश्वरी प्रकाशन

दिल्ली



प्रकाशक
राजेश्वरी प्रकाशन
K-71 छाछी बिल्डिंग
कृष्णा नगर दिल्ली-51
011,22002689, 09811226973

मूल्य : 51.00

अक्षर संयोजक
संजय लेजर प्रिंट्स
नवीन शाहदरा दिल्ली-32

मुद्रक
शंकर्स प्रोसेस
बी-डी. एस. आई. डी. सी.
कॉम्प्लैक्स झिलमिल दिल्ली-95
फोन : 32005556



विषय-सूची








www.santabant

तात का ऐसा तपोमय जीवन
रोगी हुआ तन यों दुख पाया।
यादें रहीं धुंधली अवशेष
उसी बल पे यह जन्म गँवाया॥
दिव्य शरीर रहा सदा साथ
जहाँ भी गया था सनेह सवाया।
आपके पुण्य पदों के प्रभाव से
औरों से भी अपना पन पाया॥
माता पिता के बिना सुख है कहाँ
भाग्य न था जो लिखा कर लाते।
पापों के भार से बोझिल था मन
बीतते थे दिन रोते रुलाते॥
प्रीती हुई जगदंब पदों में
लगा इनके ही न क्यों गुण गाते।
सप्तशती जगदंबिका की
है समर्पित आपके हाथा में माते॥

— ब्रजकिशोर वाजपेयी







पाठ-विधि

अपना शुद्ध भोजन एवं सात्विक आचरण करते हुए प्रातः व सायं कभी भी स्नान आदि करके शुद्ध वस्त्र धारण करने के बाद शुद्ध बर्तन में थोड़ा-सा जल लेकर तीर्थ में मंदिर में घर के पूजा स्थान में अथवा कहीं एकांत स्थान में जल के छींटे देकर आसन शुद्धि पूर्वक अपने आसन पर बैठ जाएँ। इसके बाद भगवान विष्णु का ध्यान करते हुए अपने ऊपर जल के छींटे दें। इसके बाद तीन बार अपने मुख के अंदर जल के छींटे मारें। संभव हो तो दीपक जलाकर रख लें।

इसके बाद गौरी गणेश, वरुण एवं सूर्य आदि नवग्रहों को मन में प्रणाम करें फिर भगवती दुर्गा की मूर्ति अथवा चित्र के ऊपर धूप, दीप, फूल माला, फल एवं मिठाई आदि से भक्ति भावना पूर्वक पूजा करें। इसके बाद मन एकाग्र करके भगवती दुर्गा का ध्यान करके उन्हें श्रद्धा पूर्वक प्रणाम करें। इसके बाद पाठ प्रारंभ करें, कवच, अर्गला, कीलक, रात्रि सूक्त का पाठ करते हुए क्रमशः तेरह अध्यायों का पाठ करें। बाद में देवी सूक्त एवं रहस्य त्रय पढ़ें अंत में आरती एवं क्षमा प्रार्थना करें। यह संपूर्ण पाठ की विधि है। यदि इतना संभव न हो तो केवल कवच एवं मध्यम चरित्र अर्थात दूसरा तीसरा, चौथा अध्याय का भी पाठ किया जा सकता है। इतनी सावधानी रखनी चाहिए कि अध्याय पढ़ते समय बीच में बोले नहीं यदि बोलना पड़े तो उस अध्याय का पाठ फिर से करना चाहिए। इस प्रकार से पाठ करने से भगवती माता भक्तों की सभी मनोकामनाएँ पूर्ण करती हैं।

इसी विधि से दुर्गा सप्तशती को दस बार पढ़ा जाए तो दस चंडी यज्ञ सौ बार पढ़ा जाए तो शत (सौ) चंडी यज्ञ, हजार बार पढ़ा जाए



तो सहस्त्र (हजार) चंडी यज्ञ एवं एक लाख पाठ किए जाएँ तो लक्ष (लाख) चंडी यज्ञ माना जाता है। जिस प्रकार बड़ी-बड़ी यज्ञों में कई ब्राह्मण पाठ करके यह संख्या पूरी करते हैं ठीक इसी प्रकार से कुछ भक्त लोग मिलकर भी यह संख्या पूरी कर सकते हैं। दुर्गा सप्तशती की मुख्य पुस्तक संस्कृत भाषा में होने के कारण पहले ऐसी यज्ञें संस्कृत के पढ़े-लिखे लोग ही कर सकते थे जो आज हिंदी भाषा में आपकी सुविधा के लिए प्रमाणित रूप से उपलब्ध है। यद्यपि हिंदी भाषा में इसके पहले भी इस कहानी को आधार बनाकर लिखा जा चुका है किंतु वह संपूर्ण नहीं था। अत्यंत छोटा था इस पुस्तक की विशेषता है कि संपूर्ण दुर्गा सप्तशती का हिंदी अनुवाद इसमें है इसलिए हिंदी में संपूर्ण पाठ करने के लिए इस पुस्तक को ही प्रमाणित मानना चाहिए। विवाह, जन्मदिन, तिथि त्योहार आदि अवसरों पर संगीत के माध्यम से भी यह पाठ सुविधापूर्वक किया जा सकता है। अधिक से अधिक लोगों को एकत्रित कर सामूहिक रूप में पाठ करने का अधिक फल है। ये पुस्तकें अधिक से अधिक लोगों में बाँटकर उन्हें पाठ करने के लिए प्रेरित करना चाहिए इससे उनके किए हुए पाठ में पुस्तक बाँटने वाले को भी पुण्य लाभ होता है। दुर्गा जी की कृपा से सारी मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

पाठ संपूर्ण करने के बाद हवन करना चाहिए हवन सामग्री की जगह गाय के दूध की खीर, घी और तिल मिश्रित करके **'ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडायै विच्चे स्वाहा'** इस मंत्र से नव माला जप करते हुए हवन करना चाहिए बाद में गरी के गोले से पूर्णाहुति प्रदान करनी चाहिए। हवन के बाद कन्या भोजन का विशेष महत्व होता है संभव हो तो ब्राह्मण कन्याएँ आमंत्रित करें। मुकदमा या युद्ध में विजय के लिए क्षत्रिय एवं धन का विकास करने के लिये वैश्य, शेष समस्त सुखों के लिये शूद्र वंश की कन्याओं का पूजन करना चाहिए।



श्री दुर्गा १०८ नाम स्तोत्र

दोहा- **शिव बोले कमलानने अष्टोत्तर शत नाम।**
पढ़त सुनत समुझत सुखद दुर्गा पुरवहिं काम।। १।।

ॐ सती साध्वी भव प्रीता। भव मोचिनी भवानी चिंता॥
आर्या आद्या जया त्रिनेत्रा। दुर्गा शूल धारिणी चित्रा॥
बुद्धिः मनस् चिता चितरूपा। चंद्रघंटिके घोर स्वरूपा॥
महातपा पिनाक कर धारी। चितिः अहंकारिका कुमारी॥
सत्यानंद स्वरूपिणि सत्ता। सर्व मंत्रमयी देवि अनंता॥
सदागतिः शांभवी अभव्या। दक्ष कन्यका भाव्या भव्या॥
भाविनि रत्न प्रिया सुरमाता। सुर सुंदरी सुंदरी गाता॥
वन दुर्गा पाटला अपर्णा। सब विद्या क्रूरा बहुवर्णा॥

दोहा- **वृद्ध मात माहेश्वरी ब्राह्मी ऐंद्री सत्य।**
कल मंजीर रंजिनी क्रिया बुद्धिदा नित्य॥ २॥

दक्ष यज्ञ विध्वंस कारिणी। पट्टांबर परिधान धारिणी॥
यति पाटलावती कौमारी। फिरहु अनेक शस्त्र करधारी॥
मातंगी वन दुर्गा माता। जय अमेय विक्रमा विधाता॥
चामुंडा वाराही विमला। उत्कर्षिणी वैष्णवी बहुला॥
पुरुषाकृतिः लक्ष्मी ज्ञाना। सब वाहन वाहना सुजाना॥
युवती शुंभ निशुंभ निहंत्री। मधु कैटभ महिषासुर हंत्री॥
बहुलप्रेम सर्वासुर नाशिनि। चंड मुंड द्वै असुर विनाशिनि॥
सर्वासुर विनाशना माता। सब दानव घातिनि विख्याता॥

दोहा- **जय मतंग मुनि पूजिते सर्व शास्त्रमयी मात।**
सर्व अस्त्र कर धारिणी अनेकास्त्र कुशलात।। ३।।



बल प्रदा कैशोरी प्रौढ़ा। एक कन्यका माँ अप्रौढ़ा॥
रौद्र मुखी माँ भद्र कालिका। मुक्त केशिनी जय करालिका॥
कात्यायनी महाबल धारिणि। अग्नि ज्वाल जय जय नारायणि॥
शिवदूती माँ जै महोदरी। परमेश्वरि जय जय जलोदरी॥
हरिमायहिं प्रणवहुँ शिरुनाई। जय प्रत्यक्षा माँ सुख दाई॥
ब्रह्म वादिनी मातु अनंता। जय विनाश रहिते भगवंता॥
सब विधि दुर्गा मातु विशेषा। करि प्रणाम ध्यावहिं कविशेषा॥
यहि विधि शंभु कहेउ शतनामा। शैल सुता समुझब सुखधामा॥

दोहा- दुर्गा अष्टोत्तर शत नाम महात्म्य विशाल।
पढ़त सुनत समुझत सुखद होत सबहिं सब काल।।४।।

पढ़हिं जे भक्ति सहित नर नारी। तिन्ह कहँ त्रिभुवन मंगलकारी॥
तिहुँ पुर महँ असाध्य कछु नाहीं। धन तिय तनय वाजि गज माहीं॥
धरम आदि पुरुषारथ चारी। लहहिं सनातन मुक्ति पचारी॥
माँ सुरेश्वरिहिं ध्याइ भवानी। पराभक्ति सँग पूजहिं प्रानी॥
कन्या पूजहिं सहित विधाना। दुर्गा नाम जपहिं धरि ध्याना॥
अस आचरइ जो करि विश्वासा। होइहै सुरन्ह सिद्धि नृप दासा॥
सो प्रियतमे राज्य श्री पावे। जो सभक्ति जगदंबहिं ध्यावे॥
घी कपूर कुंकुम गोरोचन। मधु सिंदूर शर्करा लाक्षन्ह॥
धारिहि सविधि जो यंत्र बनाई। मम सम भवति मोक्ष पद पाई॥

दोहा- भौमावास्या अरधनिशि शशि शतभिषा सोहात।
पढ़हिं लिखहिं जे स्तोत्र यह सब संपति सरसात।।५।।

श्री दुर्गा १०८ नाम संपूर्ण





देवी कवच

दोहा- ऋषि मृकंडु सुत सादर बार बार शिर नाइ।
कहेउ पितामह सन सकुचि दास बिसरि जनि जाइ॥

परम गुह्य नूतन जग त्राता। सिधि प्रद साधन सकल विधाता॥
जग हित हेतु कहब गुनखानी। मो पै कृपा करहु जन जानी॥
सुनि मुनि बचन जगत हितकारी। बोले विहँसि विरंचि विचारी॥
सब कहुँ सर्वकाल अनुकूला। देवी कवच सुमंगल मूला॥
पढ़त सुनत समुझत मन लाई। करत प्रयास न कछु कठिनाई॥
नवस्वरूप भगवती बनाए। नव दुर्गा पुरान श्रुति गाए॥
प्रथम शैल पुत्री जग जाना। ब्रह्म चारिणी पुनि पहिचाना॥
तीसरि चंद्रघंटिका माता। कूष्मांडा त्रिभुवन विख्याता॥
माँ स्कंध मातु वपु पंचम। कात्यायनी सुशोभित षष्ठम॥

ऊँ चण्डिका देवी को नमस्कार है।

मार्कण्डेय जी ने कहा-पितामह जो इस संसार में परम गोपनीय तथा मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला है और जो अब तक आपने दूसरे किसी के सामने प्रकट नहीं किया हो, ऐसा कोई साधन मुझे बताइये।

ब्रह्माजी बोले-ब्रह्मन् ऐसा साधन तो एक देवी का कवच ही है, जो गोपनीय से भी परम गोपनीय है, पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाला है। महामुने उसे श्रवण करो। देवी की नौ मूर्तियाँ हैं, जिन्हें नवदुर्गा कहते हैं। उनके पृथक-पृथक नाम बतलाये जाते हैं। प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी है। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को कूष्माण्डा कहते हैं। पाँचवीं दुर्गा को स्कंध माता कहते हैं। छठे स्वरूप को कात्यायनी कहते हैं। सातवाँ कालरात्रि और आठवाँ स्वरूप महागौरी के नाम से प्रसिद्ध है। नवीं दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं। १। जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, विषम संकट में फँस गया हो तथा इस प्रकार भय



सप्तम काल रात्रि दुख भंजिनि । महागौरि अष्टम जन रंजिनि॥

दोहा- सिद्धि दात्री नवमक्रम सकल जगत आधार।

नवदुर्गा जानहु इन्हैं जिन्ह ते सब संसार।। १।।

अग्नि ज्वाल सों व्याकुल प्रानी । रण महुँ कतहुँ घिर्‌यौ भटमानी॥

शोक सिंधु महुँ पर्‌यौ भुलाना । आपद काल न जाइ बखाना॥

ऐसेहु जीव भगवतिहिं ध्यावैं । चरण शरण क्यों कर दुख पावैं॥

भव भय भंजिनि विपति विनाशा। सब शुभ साधन सुखद विकासा॥

जे नर फँसे विषम मग माहीं । कोटि जतन कछु सूझत नाहीं॥

जो भय भीत फिरहि अकुलाना । पुण्य हीन दुख पावत नाना॥

भटकत फिरहिं भीरुता धारे । करहिं चिरौरी दाँत चिआरे॥

सब साधन विहीन नर जेऊ । आपद विपद साथ नहि केऊ॥

दोहा- जगत जननि तुम कहुँ भजहिं भगतिवंत जे जीव।

तिन्ह की तुम रक्षा करहु सकल जगत सुख सींव।।२।।

प्रेतासन चामुंडा धारी। वारही की महिष सवारी॥

से आतुर होकर भगवती दुर्गा की शरण में प्राप्त हुए हों, उनका कभी कोई अमंगल नहीं होता। युद्ध के समय संकट में पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नहीं दिखायी देती। उन्हें शोक, दुःख और भय की प्राप्ति नहीं होती।

जिन्होंने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। देवेश्वरी जो तुम्हारा चिन्तन करते हैं, उनकी तुम निःसंदेह रक्षा करती हो। २। चामुण्डा देवी प्रेत पर आरूढ़ होती हैं। वाराही भैंसे पर सवारी करती हैं। ऐन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड़ पर ही आसन जमाती हैं। माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ़ होती हैं। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान् विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मी देवी कमल के आसन पर विराजमान हैं और हाथ में कमल धारण किये हुए हैं। वृषभ पर आरूढ़ ईश्वरी देवी ने श्वेत रूप धारण कर रखा है। ब्राह्मी देवी हंस पर बैठी हुई हैं और सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं। इस प्रकार ये सभी माताएँ सब प्रकार की योगशक्तियों से सम्पन्न हैं। इनके सिवा और भी बहुत-सी देवियाँ हैं, जो अनेक प्रकार के आभूषणों की शोभा से युक्त तथा नाना प्रकार के रत्नों से सुशोभित हैं।



ऐंद्री गजारूढ़ शुचि सोहै । गरुड़ासन वैष्णवी विमोहै॥
वृषवाहन माहेश्वरि माता । कौमारी मयूर विख्याता॥
विष्णु प्रिया कमलासन साजै । कमल पुष्प कर कमल विराजै॥
श्वेत स्वरूप ईश्वरी माया । वृषभारूढ़ फिरहिं करिदाया॥
माँ ब्राह्मी हंसासन सोहैं । सर्वाभरण धारि जग मोहैं॥
योग शक्ति युत मैया सारी । भूषन बसन विभूषित प्यारी॥
सकल सक्रोध भगत हितकारिणि । रथारूढ़ सब स्ववश विहारिणि॥

दोहा- **शंख चक्र हल मुशल धनु गदा शक्ति कर पाश।**
खेटक तोमर परशु कर कुंत त्रिशूल समास॥ ३॥

सुर कारज सारन्ह कहुँ माई । दैत्य दलन्ह दल मलहिं गोसाईं॥
स्वजन सनेह सुधा रस पागी । धारहिं अस्त्र शस्त्र अनुरागी॥
रौद्र स्वरूप पराक्रम घोरा । बल महान उत्साह न थोरा॥
प्रणवउँ मातु सकल भय भंजिनि । दुष्प्रेक्ष्यै सब शत्रु निकंदिनि॥
रक्षा कुरु माँ अंतर्यामिनि । प्राची दिशि ऐंद्री मम स्वामिनि॥

ये सम्पूर्ण देवियाँ क्रोध में भरी हुई हैं और भक्तों की रक्षा के लिये रथ पर बैठी दिखायी देती हैं। ये शंख, चक्र, गदा, शक्ति, हल और मुसल, खेटक और तोमर, परशु तथा पाश, कुन्त और त्रिशूल एवं उत्तम शार्ङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों में धारण करती हैं। ३। दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तों को अभयदान देना और देवताओं का कल्याण करना-यही उनके शस्त्र-धारण का उद्देश्य है। कवच आरम्भ करने के पहले इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये-महान् रौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम, महान् बल और महान् उत्साह वाली देवि तुम महान् भय का नाश करने वाली हो, तुम्हें नमस्कार है। तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है। शत्रुओं का भय बढ़ाने वाली जगदम्बिके मेरी रक्षा करो।

पूर्व दिशा में ऐन्द्री इन्द्रशक्ति मेरी रक्षा करे। अग्निकोण में अग्निशक्ति, दक्षिण दिशा में वाराही तथा नैर्ऋत्यकोण में खड्गधारिणी मेरी रक्षा करें। पश्चिम दिशा में वारुणी और वायव्य कोण में मृग पर सवारी करने वाली देवी मेरी रक्षा करें।

उत्तर दिशा में कौमारी और ईशान-कोण में शूलधारिणी देवी रक्षा करें। ब्रह्माणी तुम ऊपर की ओर से मेरी रक्षा करो और वैष्णवी देवी नीचे की ओर से मेरी रक्षा करे। इसी प्रकार



अग्निकोण महँ अनल प्रचंडा। वाराही दक्षिण दिशि चंडा॥
खड्ग धारिणी नैर्ऋति आशा। पश्चिम दिशि वारुणी प्रकाशा॥
मृगवाहिनि वायव्य विराजो। कौमारी उत्तर दिशि साजो॥
शूलधरी ऐशान्य सुशोभित। ऊर्ध्व दिशा ब्रह्माणि नवोदित॥
अध अधार वैष्णवी भवानी। अग्र जया रक्षहु सुख दानी॥
विजया पृष्ठ भाग रखवारी। अजिता वाम दिशा सुखकारी॥
दक्षिण अपराजिता विशाला। उद्योतिनी शिखा विकराला॥

दोहा- भाल उमा मालाधरी रक्षित रखै ललाट।
माँ यशस्विनी भौंह महुँ शोभित युगल कपाट॥ ४॥

भौंह मध्य महुँ त्रिनयन धारिणि। यम घंटा नासा सुखकारिणि॥
नयनन्ह मध्य शंखिनी सोहै। द्वारवासिनी श्रवण विमोहै॥
काली देवि कपोलन्ह सारै। कर्णमूल शांकरी सँवारै॥
देवि सुगंधा रक्षहु नासा। उत्तरोष्ठ चर्चिका प्रवासा॥
अमृतकला अधर आधारा। जिह्वा महुँ सरस्वती पसारा॥

शव को अपना वाहन बनाने वाली चामुण्डा देवी दसो दिशाओं में मेरी रक्षा करे।

जया आगे से और विजया पीछे की ओर से मेरी रक्षा करे। वामभाग में अजिता और दक्षिणभाग में अपराजिता रक्षा करे। उद्योतिनी शिखा की रक्षा करे। उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकर रक्षा करे। ललाट में मालाधरी रक्षा करे और यशस्विनी देवी मेरी भौंहों का संरक्षण करे। ४। भौंहों के मध्य भाग में त्रिनेत्रा और नथुनों की यमघंटा देवी रक्षा करें दोनों नेत्रों के मध्य भाग में शंखिनी और कानों में द्वारवासिनी रक्षा करे। कालिका देवी कपोलों की तथा भगवती शांकरी कानों के मूल भाग की रक्षा करे। नासिका में सुगन्धा और ऊपर के ओठ में चर्चिका देवी रक्षा करे। नीचे के ओठ में अमृतकला तथा जिह्वा में सरस्वती देवी रक्षा करे।

कौमारी दाँतों की और चण्डिका कण्ठप्रदेश की रक्षा करे। चित्रघण्टा गले की घाँटी की और महामाया तालुमें रहकर रक्षा करे। कामाक्षी ठोढ़ी की और सर्वमंगला मेरी वाणी की रक्षा करे। भद्रकाली ग्रीवा में और धनुर्धरी पृष्ठवंश मेरुदण्ड में रहकर रक्षा करे। कण्ठ के बाहरी भाग में नीलग्रीवा और कण्ठ की नली में नलकूबरी रक्षा करे। दोनों कंधों में खड्गिनी



दसनन्ह महुँ कौमारी वासा। कंठ देश चंडिका निवासा॥
चित्र घंटिके बसहु हमेशा। कंठ घंटिका रुचिर प्रदेशा॥
महामाइ तालुक शुचि साजौ। माँ कामाक्षी चिबुक बिराजौ॥
सर्व मंगले रक्षहु बानी। भद्रकालि ग्रीवा सहिदानी॥
धनुर्धरी आरोग्य प्रदाता। मेरुदंड सोहै सुखदाता॥
माँ खड्गिनी स्कंध युग मोरे। रक्षहु करहुँ प्रणाम निहोरे॥

दोहा- **नील ग्रीवा कर रही बाहर कंठ सनाथ।**
कंठनली नल कूबरी वज्रधारिणी हाथ॥ ५॥

पाणि युगल दंडिनी दुलारे। ममांगुली अंबिका सँवारे॥
शूलेश्वरी नखन्ह सुखदायिनि। कुक्षि कुलेश्वरि कृपा विधायिनि॥
महादेवि स्तनन्ह सँवारै। शोक विनाशिनि शोक विदारै॥
ललिता हृदय बसहु महतारी। शूल धारिणी उदर बिहारी॥
नाभि कामिनी बसहु हमेशा। माँ गुह्येश्वरि गुह्य प्रदेशा॥
मेढ्र मोर पूतना कामिका। गुदा महिष वाहिनी नामिका॥

और मेरी दोनों भुजाओं की वज्रधारिणी रक्षा करे। ५। दोनों हाथों में दण्डिनी और अंगुलियों में अम्बिका रक्षा करे। शूलेश्वरी नखों की रक्षा करे। कुलेश्वरी कुक्षि पेट में रहकर रक्षा करे।

महादेवी दोनों स्तनों की और शोकवाहिनी देवी मन की रक्षा करे। ललिता देवी हृदय में और शूलधारिणी उदर में रहकर रक्षा करे। नाभि में कामिनी और गुह्यभाग की गुह्येश्वरी रक्षा करे। पूतना और कामिका लिंग की और महिषवाहिनी गुदा की रक्षा करे।

भगवती कटिभाग में विन्ध्यवासिनी घुटनों की रक्षा करे। सम्पूर्ण कामनाओं को देने वाली महाबला देवी दोनों पिण्डलियों की रक्षा करे। नारसिंही दोनों घुट्टियों की और तैजसी देवी दोनों चरणों के पृष्ठ भाग की रक्षा करे। श्रीदेवी पैरों की अंगुलियों में और तलवासिनी पैरों के तलुओं में रहकर रक्षा करे। अपनी दाढ़ों के कारण भयंकर दिखायी देने वाली दंष्ट्राकराली देवी नखों की और ऊर्ध्वकेशिनी देवी केशों की रक्षा करे रोमावलियों के छिद्रों में कौबेरी रक्षा करें। ६। त्वचा की वागीश्वरी देवी रक्षा करे पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा, मांस, हड्डी और मेद की रक्षा करे। आँतों की कालरात्रि और पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करे। मूलाधार आदि कमल-कोशों में पद्मावती देवी और कफ में चूडामणि देवी स्थित होकर रक्षा करे।



कटि प्रदेश भगवती निहारो। विंध्यवासिनी जानु सँवारो॥
जंघा रक्षहु शरण तुम्हारी। विनवउँ महाबले महतारी॥
सकल कामना सिद्धि प्रदाता। गुल्फन्ह कहँ नारसिंही माता॥
पाद पृष्ठ तैजसी भवानी। पादांगुलि महँ श्री सुखदानी॥
पद तल तलवासिनी हमारे। राउरि कृपा कटाक्ष सहारे॥
जय दंष्ट्रा करालिनी माता। होहु नखन्ह कहँ मम सुखदाता॥

दोहा- ऊर्ध्व केशिनी केशन्ह कुशल करहु मम मात।
रोम कूप रोमावली कौवेरी सरसात॥६॥

त्वचा बसइ बागीश्वरि सोई। दुख दलि सकल सुखद सो होई॥
अस्थि मांस मज्जा अरू मेदा। गिरिजे बसा रक्त सविभेदा॥
सकुल सुरक्षित रखहु भवानी। आँतन्ह कालरात्रि पहिंचानी॥
मुकुटेश्वरी पित्त सुखदायिनि। स्वजन सुखद हित हेतु विधायिनि॥
कमल कोष पद्मावति माता। कफ कहुँ चूड़ामणि विख्याता॥
नखप्रकाश ज्वाला मुखि माई। मातु अभेद्या संधि सुहाई॥

नख के तेज की ज्वालामुखी रक्षा करे। जिसका किसी भी अस्त्र से भेदन नहीं हो सकता, वह अभेद्या देवी शरीर की समस्त संधियों में रह कर रक्षा करे।

ब्रह्माणि आप मेरे वीर्य की रक्षा करें। छत्रेश्वरी छाया की तथा धर्मधारिणी देवी मेरे अहंकार, मन और बुद्धि की रक्षा करे। हाथ में वज्र धारण करने वाली वज्रहस्ता देवी मेरे प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान वायु की रक्षा करे। कल्याण से शोभित होने वाली भगवती कल्याणशोभना मेरे प्राण की रक्षा करे। रस, रूप, गन्ध, शब्द और स्पर्श-इन विषयों का अनुभव करते समय योगिनी देवी रक्षा करे तथा सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण की रक्षा सदा नारायणी देवी करे।७। वाराही आयु की रक्षा करे। वैष्णवी धर्म की रक्षा करे तथा चक्रिणी चक्र धारण करने वाली देवी यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की रक्षा करे। इन्द्राणी आप मेरे गोत्र की रक्षा करें। चण्डिके तुम मेरे पशुओं की रक्षा करो। महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करे और भैरवी पत्नी की रक्षा करे। मेरे पथ की सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकरी रक्षा करे। राजा के दरबार में महालक्ष्मी रक्षा करे तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी सम्पूर्ण भयों से मेरी रक्षा करे।



शुक्रसार ब्रह्माणि भवानी । छत्रेश्वरि छाया सहिदानी ॥
अहंकार मन बुद्धि हमारी । धर्मधारिणी रखहु सँवारी ॥
प्राणापान समान व्यान को। पंच प्रान मम सँग उदान को ॥
मातु वज्र हस्ता रख मोरे । विनती करहुँ जोरि कर तोरे ॥
प्राण मोर कल्याण शोभना। राखहु सब विधि करहुँ बंदना ॥

दोहा- गंध स्पर्शा रूप रस शब्द योगिनी मात।
सत रज तम नारायणी रखहु सदा कुशलात ॥ ७ ॥

वाराही मम आयु विधाता। राखहु धरम वैष्णवी माता ॥
यश कीरति विद्या लक्ष्मी धन। रखहु चक्रिणी करि प्रसन्न मन ॥
गोत्र मोर माता इंद्रानी। पशु रक्षहु चंडिके भवानी ॥
महालक्ष्मि माता सुत पालै। भार्या मम भैरवी सँभालै ॥
सुपथा करै पंथ सुखदाई। क्षेमकरी माँ मार्ग सहाई ॥
बहुरि महालक्ष्मी कहँ ध्यावौं। राजद्वार महँ सब सुख पावौं ॥
विजया सकल भाग जग माहीं। रक्षहु माँ मोहि संशय नाहीं ॥

देवि जो स्थान कवच में नहीं कहा गया है, अतएव रक्षा से रहित है, वह सब तुम्हारे द्वारा सुरक्षित हो, क्योंकि तुम विजयशालिनी और पापनाशिनी हो। यदि अपने शरीर का भला चाहे तो मनुष्य बिना कवच के कहीं एक पग भी न जाय-कवच का पाठ करके ही यात्रा करे। कवच के द्वारा सब ओर से सुरक्षित मनुष्य जहाँ-जहाँ भी जाता है, वहाँ-वहाँ उसे धन-लाभ होता है तथा सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि करने वाली विजय की प्राप्ति होती है। वह जिस-जिस अभीष्ट वस्तु का चिन्तन करता है, उस-उसको निश्चय ही प्राप्त कर लेता है। ८। वह पुरुष इस पृथ्वी पर तुलना रहित महान् ऐश्वर्य का भागी होता है। कवच से सुरक्षित मनुष्य निर्भय हो जाता है। युद्ध में उसकी पराजय नहीं होती तथाा वह तीनों लोकों में पूजनीय होता है। देवी का यह कवच देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। जो प्रतिदिन नियमपूर्वक तीनों संध्याओं के समय श्रद्धा के साथ इसका पाठ करता है, उसे दैवी कला प्राप्त होती है तथा वह तीनों लोकों में कहीं भी पराजित नहीं होता। इतना ही नहीं, वह अपमृत्यु से रहित हो सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है। मकरी, चेचक और कोढ़ आदि उसकी सम्पूर्ण व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। कनेर, भाँग, अफीम, धतूरे आदि का स्थावर



जो थल कहे न कवच भुलाई। माँ जयन्ति तहँ पाप नशाई॥
रखौ सुरक्षित सो सब भाँती। नहिं समुहाहिं असुर आराती॥

दोहा- **जो शुभ चहै सो कवच पढ़ि जाय जहाँ करि आस।**
विजय अर्थ ऐश्वर्य सुख पावै सहज प्रयास॥ ८॥

पूरन होहिं मनोरथ सारे। जो धरि ध्यान कवच चित धारे॥
अतुलैश्वर्य होहि जग माहीं। निर्भय फिरइ सो संशय नाहीं॥
रण नहिं होहि पराजय काऊ। तिहुँ पुर पूज्य सो कवच प्रभाऊ॥
सुर दुर्लभ यह कवच विचारी। तीनिहु साँझ नित्य चितधारी॥
श्रद्धा सहित पढ़हिं जे प्रानी। देहिं कृपा करि कला भवानी॥
अपराजित सो तिहुँ पुर माहीं। अल्प मृत्यु कर संशय नाहीं॥
निरुज शरीर सकल सुख पावत। लहै शतायु फिरै गुण गावत॥
मकरी चेचक वा विष पीरा। कुष्ठ आदि नहीं ब्याधि शरीरा॥
मंत्र यंत्र अभिचार अनंता। भूचर खेचर वारि बसंता॥

दोहा- **तन निरोग मन खुश रहै स्वजन सनेह अपार।**
भूत प्रेत हेरैं नहीं व्यर्थ सकल अभिचार॥ ९॥

विष, साँप और बिच्छू आदि के काटने से चढ़ा हुआ जंगम विष तथा अहिफेन और तेल के संयोग आदि से बनने वाला कृत्रिम विष-ये सभी प्रकार के विष दूर हो जाते हैं, उनका कोई असर नहीं होता। इस पृथ्वी पर मारण-मोहन आदि जितने आभिचारिक प्रयोग होते हैं तथा इस प्रकार के जितने मन्त्र, यन्त्र होते हैं वे सब इस कवच को हृदय में धारण कर लेने पर उस मनुष्य को देखते ही नष्ट हो जाते हैं। ९। ये ही नहीं, पृथ्वी पर विचरने वाले ग्राम देवता, आकाशचारी देव विशेष, जल के संबंध से प्रकट होने वाले गण, उपदेश मात्र से सिद्ध होने वाले निम्न कोटि के देवता, अपने जन्म के साथ प्रकट होने वाले देवता, कुल देवता, माला कण्ठमाला आदि, डाकिनी, शाकिनी, अन्तरिक्ष में विचरने वाली अत्यन्त बलवती भयानक डाकिनियाँ, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, बेताल, कूष्माण्ड और भैरव आदि अनिष्टकारक देवता भी हृदय में कवच धारण किये रहने पर उस मनुष्य को देखते ही भाग जाते हैं। कवचधारी पुरुष को राजा से सम्मान-वृद्धि प्राप्त होती है। यह कवच मनुष्य के तेज की वृद्धि करने वाला और उत्तम है। कवच का पाठ करने वाला पुरुष अपनी कीर्ति से विभूषित भूतल पर अपने सुयश के साथ-साथ वृद्धि को प्राप्त होता है। जो पहले



सहजा कुलजा कंठ कुमाला। डाकिनि शाकिनि भूत बेताला॥
नभचर ग्रह पिशाच गंधर्वा। यक्ष आदि नहिं ताकत सर्वा॥
ब्रह्म राक्षस भैरव भीषण। कूष्मांडादि पलायित तत्क्षण॥
कहि न जाइ जग कवच प्रभाऊ। धारे हृदय विपति नहिं काऊ॥
तेज बढ़ै नृप सन सुख पावै। कीर्तिवंत तिहुँ पुर यश गावै॥
सप्तशती सकवच जे पढ़हीं। दिन दूने निशि चौगुन बढ़हीं॥
बन उपवन कानन सँग शैला। सरसै भूमंडल अलबेला॥
वसुधा सृष्टि सुहावन पावन। पुत्र पौत्र संतति मन भावन॥
तौ लौं बसै अमर भुवि माहीं। 'शेष' साक्ष्य कछु संशय नाहीं॥
तन तजि दिव्य धाम ते जाहीं। सुर दुर्लभ आनंद अघाहीं॥

दोहा- **महामाइ की कृपा लहि पावत दिव्य शरीर।**
शिव सायुज्य प्रभाव सों विगत होत सब पीर॥ १०॥

कवच संपूर्ण

कवच का पाठ करके उसके बाद सप्तशती चण्डी का पाठ करता है, उसकी जब तक वन,पर्वत और काननों सहित यह पृथ्वी टिकी रहती है, तब तक यहाँ पुत्र-पौत्र आदि संतान परम्परा बनी रहती हैं, फिर देह का अन्त होने पर वह पुरुष भगवती महामाया के प्रसाद से उस नित्य परमपद को प्राप्त होता है, जो देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। वह सुन्दर दिव्य रूप धारण करता और कल्याणमय शिव के साथ आनन्द का भागी होता है। १०।





अर्गला स्तोत्र

दोहा- **तब मृकंडु सुत बोले सुनहु सकल हरषाय।**
कहहुँ अर्गला स्तोत्र यह माँ देविहिं शिरु नाय॥

जय काली मंगला जयंती। भद्रकालिके जय दुखहंती॥
हे कपालिनी दुर्गा माता। क्षमा शिवा धात्री सुख दाता॥
स्वाहा स्वधा जगत हितकारिणि। जय चामुंडे सर्व विहारिणि॥
प्रणवउँ कालरात्रि महतारी। मधुकैटभ संहारन हारी॥
विधि कहँ वर दीन्हेउ सुखदानी। रूप विजय यश देहु भवानी॥
महिष विदारि भक्त सुखदायिनि। रूप विजय यश देहु विधायिनि॥
रक्तबीज संहारिणि माई। चंड मुंड आदिन्ह दुखदाई॥
रूप विजय यश देहु भवानी। कृपा करहु माता जन जानी॥

दोहा- **शुंभ निशुंभ घमंड बड़ भंजि सकल संदेहु।**
धूम्राक्षहिं मर्देउ बहुरि रूप विजय यश देहु॥ १ ॥

रूप विजय यश देहु सदाहीं। शत्रु विनाश करहु छन माहीं॥
वंदनीय पद युग अरुणारे। सब सौभाग्य प्रसाद तुम्हारे॥

ॐ चण्डिका देवी को नमस्कार है।

मार्कण्डेयजी कहते हैं-जयन्ती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री, स्वाहा और स्वधा,-इन नामों से प्रसिद्ध जगदम्बिके तुम्हें मेरा नमस्कार हो। देवि चामुण्डे तुम्हारी जय हो। सम्पूर्ण प्राणियों की पीड़ा हरने वाली देवि तुम्हारी जय हो। सबमें व्याप्त रहने वाली देवि तुम्हारी जय हो। कालरात्रि तुम्हें नमस्कार हो। मधु और कैटभ को मारने वाली तथा ब्रह्माजी को वरदान देने वाली देवि तुम्हें नमस्कार है। तुम मुझे रूप (आत्मस्वरूप) का ज्ञान दो, जय (मोह पर विजय) दो, यश (मोह विजय तथा ज्ञान-प्राप्ति रूप यश) दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। महिषासुर का नाश करने वाली तथा भक्तों को सुख देने वाली देवि तुम्हें नमस्कार है। तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। रक्तबीज का वध और चण्ड-मुण्ड का विनाश करने वाली देवि तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। शुम्भ और निशुम्भ तथा धूम्रलोचन का मर्दन करने वाली देवि तुम रूप दो, जय दो,यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। १। सबके द्वारा वन्दित युगल चरणों वाली



रूप चरित्र अचिंत्य अनूपा। शत्रु विदारिणि माँ सुरभूपा॥
रूप विजय यश दै रिपु नाशौ। पाप प्रणाशिनि भक्ति प्रकाशौ॥
भगतिवंत जे स्तुति गावैं। रूप विजय यश सहजहिं पावैं॥
पूजहिं तुम्हहिं भक्त जन जैसे। रूप विजय यश पावहिं तैसे॥
देहु परम सुख निरुज अनूपा। सब सौभाग्य विजय यश रूपा॥
जे स्वारथी द्वेष रत अंबा। नाशहु वैर भाव अविलंबा॥

दोहा- **करहु नित्य बल वृद्धि मम पर हित हेतु महान।**
रूप विजय यश देउ मोहिं सदा करहु कल्यान॥ २॥

श्री समेत संपत्ति सुहाई। जय यश रूप देहु सुखदाई॥
सकल सुरासुर सहजहिं माता। घिसहिं मुकुट मणि पद जल जाता॥
शत्रु संहार होत गुण गावत। रूप विजय यश सब सुख पावत॥
विद्या कीर्ति देहु धन भारी। रूप विजय यश सकल सँवारी॥
दैत्य दर्प दलिनी जग त्राता। प्रणतहिं रूप विजय यश दाता॥
विधिहु कीन्हि मुख चारि प्रशंसा। जय जगदंब दिव्य अवतंशा॥
चतुर्भुजी माते सुखदायिनि। रूप विजय यश देहु विधायिनि॥
राउर गान करैं हरिराई। नित्य निरंतर भगति सुहाई॥

तथा सम्पूर्ण सौभाग्य प्रदान करने वाली देवि तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवि तुम्हारे रूप और चरित्र अचिन्त्य हैं। समस्त शत्रुओं का नाश करने वाली हो। रूप दो, जय दो,यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। पापों को दूर करने वाली चण्डिके जो भक्तिपूर्वक तुम्हारे चरणों में सर्वदा मस्तक झुकाते हैं,उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो और उनके काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। रोगों का नाश करने वाली चण्डिके जो भक्तिपूर्वक तुम्हारी स्तुति करते हैं, उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो और उनके काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। मुझे सौभाग्य और आरोग्य दो। परम सुख दो, रूप दो, जय दो, यश दो और मेरे काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो जो मुझ से द्वेष रखते हों, उनका नाश और मेरे बल की वृद्धि करो रूप दो, जय दो, यश दो और मेरे काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवि मेरा कल्याण करो। मुझे उत्तम संपत्ति प्रदान करो। रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। २।

अम्बिके देवता और असुर-दोनों ही अपने माथे के मुकुट की मणियों को तुम्हारे चरणों पर घिसते रहते हैं। तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। तुम अपने भक्तजन को विद्वान्, यशस्वी और लक्ष्मीवान् बनाओ तथा रूप दो,जय दो, यश दो और उसके काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। प्रचण्ड दैत्यों के दर्प का



देहु सुरूप सुयश सब भाँती। चहुँ दिशि विजय असुर दल घाती॥

दोहा- काम क्रोध लोभादि खल दल उपजत मन माहिं।
सादर सुमिरत भगवतिहिं सकल समूल नशाहिं॥ ३॥

हिमगिरि सुता नाथ धरि ध्याना। गावहिं गुण गण सहित विधाना॥
जय परमेश्वरि जय जगदंबा। देहु सुरूप विजय यश अंबा॥
इंद्राणी पति पूजित माता। शुचि सद्भाव जगत विख्याता॥
परमेश्वरि सुरूप जय देहू। विजय विशेष निबाहहु नेहू॥
दैत्यन्ह नाशेउ घोर घमंडा। बादि प्रचंड किए भुजदंडा॥
माँगहुँ वर माते कर जोरी। सुजश सुरूप विजय वश मोरी॥
देवि भक्त जन मन आनंदिनि। जय यश रूपद शत्रु निकंदिनि॥
भव सागर तारण कर जोई। उत्तम कुलज कन्यका सोई॥
अस पत्नी दीजै अनुकूला। बोलत वचन झरहिं जनु फूला॥

दोहा- पढ़ै प्रथम स्तोत्र पुनि महास्तोत्र धरि ध्यान।
सुलभ सकल संपति तहँ मिलहिं विविध वरदान॥ ४॥

हअर्गला स्तोत्र संपूर्ण

दलन करने वाली चण्डिके मुझ शरणागत को रूप दो, जय दो, यश दो और मेरे काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। चतुर्मुख ब्रह्माजी के द्वारा प्रशंसित चार भुजाधारिणी परमेश्वरि तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवि अम्बिके भगवान् विष्णु नित्य-निरन्तर तुम्हारी स्तुति करते रहते हैं। तुम रूप दो, यश दो, और काम-क्रोध मोह आदि शत्रुओं का नाश करो। ३। हिमालय-कन्या पार्वती के पति महादेव जी द्वारा प्रशंसित होने वाली परमेश्वरी तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। प्रचण्ड भुजदण्डों वाले दैत्यों का घमंड चूर करने वाली देवि तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवि अम्बिके तुम अपने भक्तजनों को सदा असीम आनन्द प्रदान करती रहती हो। मुझे रूप दो, जय दो, यश दो और मेरे काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। मन की इच्छा के अनुसार चलने वाली मनोहर पत्नी प्रदान करो, जो दुर्गम संसार सागर से तारने वाली तथा उत्तम कुल में उत्पन्न हुई हो। जो मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ करके सप्तशती रूपी महास्तोत्र का पाठ करता है, वह सप्तशती की जप संख्या से मिलने वाले श्रेष्ठ फल को प्राप्त करता है। साथ ही वह प्रचुर सम्पत्ति भी प्राप्त कर लेता है। ४।



कीलक

मार्कण्डेय उवाच

दोहा- शुद्ध ज्ञान मय देह जो वेदत्रय दृगतीन।
श्रेयप्रद शशि धर सुखद नमन करे दुख छीन॥

मंत्र सिद्धि महुँ विघ्न विशाला। शाप रूप कीलक कलिकाला॥
ताहि निवारि सिद्धिप्रद जोई। कवनेउँ मंत्र जपे शुभ होई॥
सप्तशती जे पढ़हिं सँवारी। सिद्ध होइ देवी सुखकारी॥
कार्य सिद्धि सब छिन महुँ होई। मंत्र औषधि साधन बिन सोई॥
उच्चाटन समेत षड्कर्मा। सिद्ध होत साधक निज धर्मा॥
दुर्लभ वस्तु आदि जग जेऊ। मंत्र प्रभाव लहहिं नर तेऊ॥
अन्य मंत्र जप की तजि आसा। सप्तशती पढ़ि विनहिं प्रयासा॥
पावहिं सब सुख ऐसेहु प्रानी। संशय जोग न मातु भवानी॥

ॐ चण्डिका देवी को नमस्कार है।

मार्कण्डेय जी कहते हैं-विशुद्ध ज्ञान ही जिनका शरीर है, तीनों वेद ही जिनके तीन दिव्य नेत्र हैं, जो कल्याण प्राप्ति के हेतु हैं तथा अपने मस्तक पर अर्धचन्द्र का मुकुट धारण करते हैं, उन भगवान् शिव को नमस्कार है। मन्त्रों का जो अभिकीलक है अर्थात् मन्त्रों की सिद्धि में विघ्न उपस्थित करने वाले शाप रूपी कीलक का जो निवारण करने वाला है,उस सप्तशती स्तोत्र को सम्पूर्ण रूप से जानना चाहिये और जानकर उनकी उपासना करनी चाहिये, यद्यपि सप्तशती के अतिरिक्त अन्य मन्त्रों के जप में भी जो निरन्तर लगा रहता है, वह भी कल्याण का भागी होता है। उसके भी उच्चाटन आदि कर्म सिद्ध होते हैं तथा उसे भी समस्त दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति हो जाती है, तथापि जो अन्य मन्त्रों का जप न करके केवल इस सप्तशती नामक स्तोत्र से ही देवी की स्तुति करते हैं, उन्हें स्तुति मात्र से ही सच्चिदानन्द स्वरूपिणी देवी सिद्ध हो जाती है। उन्हें अपने कार्य की सिद्धि के लिये मन्त्र, औषधि तथा अन्य किसी साधन के उपयोग की आवश्यकता नहीं रहती। बिना जप के ही उनके उच्चाटन आदि समस्त आभिचारिक कर्म सिद्ध हो जाते हैं। इतना ही नहीं, उनकी सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ भी सिद्ध होती हैं। लोगों के मन में यह शंका थी कि जब केवल सप्तशती को छोड़कर अन्य मन्त्रों की उपासना से भी समान रूप से सब कार्य सिद्ध होते हैं, तब इनमें श्रेष्ठ कौन-



दोहा- कृष्ण पक्ष की अष्टमी चौदश तिथि शुभ जान।
जो भगवतिहिं समर्पि सब पुनि प्रसाद मन मान॥ १ ॥

ग्रहण करइ सादर सुख मानी। तेहि पर होहिं प्रसन्न भवानी॥
अस एकाग्र चित्त अभ्यासा। करि प्रयास पूरिअ अभिलाषा॥
जे संशय राखहिं मन माहीं। ते नर कुटिल न सुख समुहाहीं॥
जगत जननि कर कृपा विशेषी। पावत कतहुँ न साधक द्वेषी॥
एहि विधि सिद्धि माहिं प्रतिबंधक। मानहुँ विविध रूप महँ कीलक॥
महादेव कीलित करि राखा। निष्कीलन भक्तन्ह हित भाखा॥
सप्तशती स्तोत्र पुनीता। निष्कीलित जे पढ़हिं विनीता॥
पावहिं ते सुख सुमति सुजाना। सब बिधि कृपा करहिं भगवाना॥
कीलन जानि करै परिहारा। सप्तशती पुनि पढ़इ उदारा॥

सा साधन है ? लोगों की इस शंका को सामने रखकर भगवान् शंकर ने अपने पास आये हुए जिज्ञासुओं को समझाया कि यह सप्तशती नामक सम्पूर्ण स्तोत्र ही सर्वश्रेष्ठ एवं कल्याणमय है।

तदनन्तर भगवती चण्डिका के सप्तशती नामक स्तोत्र को महादेव जी ने गुप्त कर दिया। सप्तशती के पाठ से जो पुण्य प्राप्त होता है, उसकी कभी समाप्ति नहीं होती, किंतु अन्य मन्त्रों के जपजन्य पुण्य की समाप्ति हो जाती है। अतः भगवान् शिव ने अन्य मन्त्रों की अपेक्षा जो सप्तशती की ही श्रेष्ठता का निर्णय किया, उसे यथार्थ ही जानना चाहिये। अन्य मन्त्रों का जप करने वाला पुरुष भी यदि सप्तशती के स्तोत्र और जप का अनुष्ठान कर ले तो वह भी पूर्ण रूप से ही कल्याण का भागी होता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। जो साधक कृष्णपक्ष की चतुर्दशी अथवा अष्टमी को एकाग्रचित्त होकर भगवती की सेवा में अपना सर्वस्व समर्पित कर देता है और फिर उसे प्रसाद रूप से ग्रहण करता है । १। उसी पर भगवती प्रसन्न होती हैं अन्यथा उनकी प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती इस प्रकार सिद्धि के प्रतिबन्धक रूप कीलक के द्वारा महादेव जी ने इस स्तोत्र को कीलित कर रखा है। जो पूर्वोक्त रीति से निष्कीलन करके इस सप्तशती-स्तोत्र का प्रतिदिन स्पष्ट उच्चारण पूर्वक पाठ करता है, वह मनुष्य सिद्ध हो जाता है, वही देवी का पार्षद होता है और वही गन्धर्व भी होता है। सर्वत्र विचरते रहने पर भी इस संसार में उसे कहीं भी भय नहीं होता। वह अपमृत्यु के वश में नहीं पड़ता तथा देह त्यागने के अनन्तर मोक्ष प्राप्त कर लेता है। अतः कीलन को जानकर



जे यहि भाँति करहिं नहिं प्रानी। अवसि नसाहिं ते ज्ञान गुमानी॥
अस विचारि परिहरि संदेहा। पढ़हिं बुद्धजन सहित सनेहा॥
जो सौभाग्य आदि जग माहीं। ललनाजन धारत पुलकाहीं॥
सो सब समुझिअ देवि प्रसादा। जपै स्तोत्र यह रहित प्रमादा॥
मंद स्वर सों पाठ जो करई। लहै अल्प फल दुख दल दरई॥
उच्च स्वर कर उच्च प्रभाऊ। भगतिवंत सकुचै नहिं काऊ॥

दोहा- जिनके कृपा प्रसाद सों विगत शत्रु भव पीर।
लहैश्वर्य सौभाग्य सुख संपति निरुज शरीर॥
भजहु मंद मति भगवतिहिं जौ चाहहु कल्यान।
विमुख भए अनभल सकल 'शेष' कवीश प्रमान॥ २ ॥

कीलक संपूर्ण



उसका परिहार करके ही सप्तशती का पाठ आरम्भ करे। जो ऐसा नहीं करता, उसका नाश हो जाता है। इसलिये कीलक और निष्कीलन का ज्ञान प्राप्त करने पर ही यह स्तोत्र निर्दोष होता है और विद्वान् पुरुष इस निर्दोष स्तोत्र का ही पाठ आरम्भ करते हैं। स्त्रियों में जो कुछ भी सौभाग्य आदि दृष्टिगोचर होता है, वह सब देवी के प्रसाद का ही फल है। अत: इस कल्याणमय स्तोत्र का सदा जप करना चाहिये। इस स्तोत्र का मन्द स्वर से पाठ करने पर स्वल्प फल की प्राप्ति होती है और उच्च स्वर से पाठ करने पर पूर्ण फल की सिद्धि होती है। अत: उच्चस्वर से ही इसका पाठ आरम्भ करना चाहिये। जिनके प्रसाद से ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, सम्पत्ति, शत्रुनाश तथा परम मोक्ष की भी सिद्धि होती है, उस कल्याणमयी जगदम्बा की स्तुति मनुष्य क्यों नहीं करते। २।







रात्रि सूक्त

विश्वेश्वरी विश्व धारिणी। पालन अरु संहार कारिणी॥
तेजरूप हरि शक्ति बहोरी। निद्रा देविहिं कहेउ निहोरी॥
तुम स्वाहा तुम स्वधा भवानी। वषट्कार स्वर मानहिं ज्ञानी॥
सुधा त्वमक्षर नित्य त्रिधामय। अनुच्चार्य अधमात्रा जानय॥

दोहा- अरध मात्रा रूप महुँ घट घट व्यापहु मात।
यह रहस्य जानहिं विबुध सुमिरत चित हरषात॥

तुम संध्या सावित्री माता। धारहु जगत सृजहु सुखदाता॥
उत्पति समय सृष्टि सुखरूपा। पालन कहुँ स्थिति स्वरूपा॥
कल्प अंत सब जगत नशाया। तुम्हीं महाविद्या महामाया॥
तुम्हैं महामेधा जग जानै। महास्मृति तुम कहँ पहिचानै॥
तुम्हीं महामोहा महादेवी। महासुरी तुम सब सुर सेवी॥
प्रकृती तुम्हीं त्रिगुण उपजावहु। काल रात्रि महारात्रि कहावहु॥
मानहिं मोहरात्रि तुम्हैं ज्ञानी। त्वं श्री त्वं ईश्वरी भवानी॥
त्वं ह्री बुद्धिः बोध स्वरूपा। लज्जा पुष्टि तुष्टि सुख रूपा॥

दोहा- शांति क्षांति खड्गिनि तथा शूलिनि घोरा मात।
शंख चक्र गदा चाप शर परिघ भुसुंडि सोहात।।

तुम्हहीं सौम्य सौम्य तर माई। तुम सम कहँ जग सुंदरताई॥
आप परापर पर परमेश्वरि। सर्व स्वरूप सद् असद् ईश्वरि॥
सृजहिं जे जग पालहिं संहारहिं। कर्‌यौ नींद वश तिन्ह करतारहिं॥
तुम्हरी कृपा धरहिं तनु हरि हर। तुम सम को त्रैलोक शक्ति धर॥
स्तुति करौं कवन विधि तोरी। हरहु दया करि विपदा मोरी॥
मधु कैटभहिं मोह महुँ डारी। करहु प्रबोध उठैं हरि हारी॥
प्रेरहु हरिहिं वधहिं एहि काला। मधु कैटभ युगदैत्य विशाला॥
एहि विधि स्तुति कीन्हि निहोरी। बोले ऋषि सोइ चरित बहोरी॥

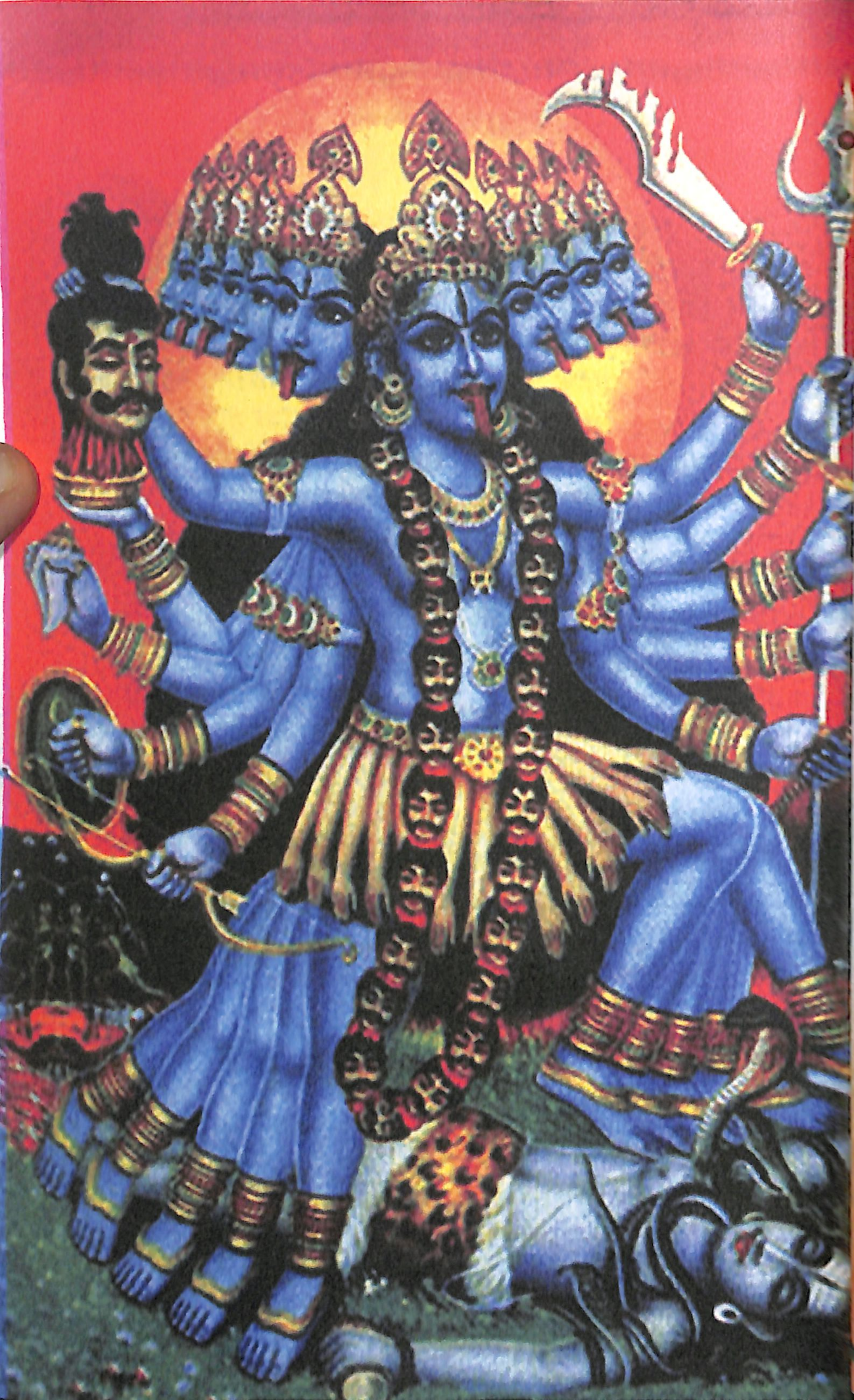
इति संपूर्णम्



श्री

पहला अध्याय





पहला अध्याय

विनियोग

प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि, महाकाली देवता, गायत्री छन्द, नन्दा शक्ति, रक्तदन्तिका बीज, अग्नि तत्त्व और ऋग्वेद स्वरूप है। श्री महाकाली देवता की प्रसन्नता के लिये प्रथम चरित्र के जप में विनियोग किया जाता है। (ऐसा पढ़कर थोड़ा जल जमीन पर छोड़े)

ध्यान

दोहा- विष्णु शयनरत जानि विधि मधु कैटभ वध काज।
भजहु दस भुजी कालिकहिं धारे शस्त्र समाज॥
गदा वाण धनु चक्र असि परिघ शंख शिर शूल।
कर भुसुंडि दृग तीनि शुभ भजहु मातु सुख मूल॥
दस मुख दस पद पावन नीलमणि सम गात।
दिव्य विभूषण सकल तन प्रणवहुँ पुनि पुनि मात॥

दिन कर सुत सावर्णि सुजाना।अष्टम मनु स्वरूप जग जाना॥
तिन्हकी उत्पति कथा विशाला।मन्वन्तर प्रभु भे तेहि काला॥

ध्यान-भगवान् विष्णु के सो जाने पर मधु और कैटभ को मारने के लिये कमलजन्मा ब्रह्मा जी ने जिनका स्तवन किया था,उन महाकाली देवी का मैं सेवन करता हूँ। वे अपने दस हाथों में खड्ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शंख धारण करती हैं। उनके तीन नेत्र हैं। वे समस्त अंगों में दिव्य आभूषणों से विभूषित हैं। उनके शरीर की कान्ति नीलमणि के समान है तथा वे दस मुख और दस पैरों से युक्त हैं।

मार्कण्डेय जी बोले-सूर्य के पुत्र सावर्णि जो आठवे मनु कहे जाते हैं, उनकी उत्पत्ति की कथा विस्तारपूर्वक कहता हूँ, सुनो सूर्यकुमार महाभाग सावर्णि भगवती महामाया के अनुग्रह से जिस प्रकार मन्वन्तर के स्वामी हुए वही प्रसंग सुनाता हूँ। पूर्व काल की बात है, स्वारोचिष मन्वन्तर में सुरथ नाम के एक राजा थे, जो चैत्रवंश में उत्पन्न हुए थे। उनका समस्त भूमण्डल पर अधिकार था। वे प्रजा का अपने औरस पुत्रों की भाँति धर्मपूर्वक पालन करते थे, तो भी उस समय कोलाविध्वंसी नाम के क्षत्रिय उनके शत्रु हो गये। राजा सुरथ की दण्डनीति बड़ी प्रबल थी। उनका शत्रुओं के साथ संग्राम हुआ। यद्यपि कोलाविध्वंसी संख्या में कम थे, तो भी राजा सुरथ युद्ध में उनसे परास्त हो गये। १। तब वे युद्धभूमि से अपने नगर को लौट आये और केवल अपने देश के राजा होकर रहने लगे समूची पृथ्वी से अब उनका



ऋषि समूह सन कवन दुराऊ। महामाइ कर प्रकट प्रभाऊ॥
स्वारोचिष मन्वन्तर माहीं। सुरथ नृपति सम कहुँ कोउ नाहीं॥
चैत्रवंश पावन तेहि काला। प्रकट भयउ जहँ सुरथ नृपाला॥
सकल भूमि पर एक नरेशू। सब कहुँ सुखद न कतहुँ कलेशू॥
अतुलित बल प्रताप तेहि माहीं। पालहि प्रजहिं शोक कहुँ नाहीं॥
एहि प्रकार सब प्रजा सुखारी। ईर्ष्यावश रिपु ठानहिं रारी॥

दोहा- कोला विध्वंसिन सन भयउ घोर संग्राम।
जदपि रहे अति अलप ते तबहुँ भयउ विधि वाम।। १ ।।

हारा नृपति नगर निज आवा। वसुधाधिप लघु राज्य बनावा॥
करि आक्रमण शत्रु चढ़ि आए। घेरि नगर रण साज सजाए॥
सोचहि नृप जब दुर्दिन आवहिं। स्वजन सकल घिरि वैर भँजावहिं॥
राजकोष मंत्रिन्ह हथियाए। सैनिक रहहिं तिन्हैं मन भाए॥
जानि सुरथ निज नष्ट प्रभाऊ। फेर दिनन्ह कर दोष न काऊ॥
नृप शिकार मिस वाजि सवारा। चलेउ अकेल विपिन पगुधारा॥

अधिकार जाता रहा, किंतु वहाँ भी उन प्रबल शत्रुओं ने उस समय महाभाग राजा सुरथ पर आक्रमण कर दिया।

राजा का बल क्षीण हो चला था इसलिये उनके दुष्ट, बलवान् एवं दुरात्मा मन्त्रियों ने वहाँ उनकी राजधानी में भी राजकीय सेना और खजाने को हथिया लिया। सुरथ का प्रभुत्व नष्ट हो चुका था, इसलिये वे शिकार खेलने के बहाने घोड़े पर सवार हो वहाँ से अकेले ही एक घने जंगल में चले गये। वहाँ उन्होंने विप्रवर मेधा मुनि का आश्रम देखा, जहाँ कितने ही हिंसक जीव अपनी स्वाभाविक हिंसावृत्ति छोड़कर परम शान्तभाव से रहते थे। मुनि के बहुत-से शिष्य उस वन की शोभा बढ़ा रहे थे। वहाँ जाने पर मुनि ने उनका सत्कार किया और वे उन मुनि श्रेष्ठ के आश्रम पर इधर-उधर विचरते हुए कुछ काल तक रहे। २। जिस प्रकार बच्चे को जन्म देते समय स्त्री को बहुत कष्ट होता है किंतु थोड़े दिन बाद वह भूलकर फिर वही करती है इसी प्रकार कुत्ता जिस दरवाजे पर पैरों से मारा जाता है भूल कर फिर वहीं जाता है। तैसे ही ममता से आकृष्टचित्त होकर राजा वहाँ इस प्रकार चिन्ता करने लगे-पूर्वकाल में मेरे पूर्वजों ने जिसका पालन किया था, वही नगर आज मुझ से रहित है। पता नहीं, मेरे दुराचारी भृत्यगण उसकी धर्मपूर्वक रक्षा करते हैं या नहीं।



आगे दीखि सघन तरुछाँहीं। हिंसक जीव क्रूरता नाहीं॥
सब सन करहिं परस्पर प्रेमा। शांत स्वभाव रहहिं शुचि नेमा॥
मेधा मुनि आश्रम अति पावन। रहत सशिष्य सुहात सुहावन॥
दोहा-नृपहिं अतिथि सम जान ऋषि करि आतिथ्य विशाल।
सादर राख्यो भूप कहुँ बीति गयउ कछु काल॥ २॥
प्रसव काल दारुण दुख पावै। युवती पियहिं बहुरि उर लावै॥
पाद प्रहार श्वान जहँ पावै। विसरि जात पुनि सो तेहिं भावै॥
यहि विधि माया रही नचाई। भ्रम वश जीव फँस्यौ उरझाई॥
सोचत भूप मोरि रजधानी। पालत रहेउँ करम मन बानी॥
मम पूर्वजन्ह कीन्ह तहँ राजू। मोसन्ह सो विहीन भई आजू॥
केहि विधि पालहिं भृत्य हमारे। शूर वीर हाथी मद वारे॥
शत्रु अधीन रहहिं तहँ कैसे। स्वजन मोर तिन्हैं ताकहिं तैसे॥
संचेउ कोष बहुत कठिनाई। शत्रु करत व्यय वेगि नशाई॥
एहि विधि सोच करहि दिन राती। तबहिं मिल्यौ एक वैश्य सँघाती॥

जो सदा मद की वर्षा करने वाला और शूरवीर था, वह मेरा प्रधान हाथी अब शत्रुओं के अधीन होकर न जाने किन भोगों को भोगता होगा? जो लोग मेरी कृपा धन और भोजन पाने से सदा मेरे पीछे-पीछे चलते थे, वे निश्चय ही अब दूसरे राजाओं का अनुसरण करते होंगे। उन अपव्ययी लोगों के द्वारा सदा खर्च होते रहने के कारण अत्यन्त कष्ट से जमा किया हुआ मेरा वह खजाना खाली हो जायगा ये तथा और भी कई बातें राजा सुरथ निरन्तर सोचते रहते थे। एक दिन उन्होंने वहाँ विप्रवर मेधा के आश्रम के निकट एक वैश्य को देखा और उससे पूछा-भाई तुम कौन हो? यहाँ तुम्हारे आने का क्या कारण है? तुम क्यों शोकग्रस्त और अनमने से दिखायी देते हो? राजा सुरथ का यह प्रेमपूर्वक कहा हुआ वचन सुनकर वैश्य ने विनीत भाव से उन्हें प्रणाम करके कहा-

वैश्य बोला-राजन् मैं धनियों के कुल में उत्पन्न हुआ हूँ। मेरा नाम समाधि है। मेरे दुष्ट स्त्री-पुत्रों ने धन के लोभ से मुझे घर से बाहर निकाल दिया है। मैं इस समय धन, स्त्री और पुत्रों से वंचित हूँ। मेरे विश्वसनीय बन्धुओं ने मेरा ही धन लेकर मुझे दूर कर दिया है, इसलिये दुखी होकर मैं वन में चला आया हूँ। ३। यहाँ रहकर मैं इस बात को नहीं जानता कि मेरे पुत्रों की, स्त्री की और स्वजनों की कुशल है, या नहीं। इस समय घर में वे कुशल



तदपि मोह सम सबहिं सतावै। खगन्ह दशा देखत बनि आवै॥
भटकहिं क्षुधित अन्न कन लावत। चंचु चुनाइ शिशुन्ह सुखु पावत॥
लोभ विवश नर नारि दुखारी। संतति सन आशा सुखकारी॥
विस्मय जोग न जग भरमाया। सृष्टि हेतु विरचइ हरि माया॥
एहि विधि मोहित सकल पसारा। ज्ञानिन्ह मन महुँ मोह अपारा॥
रचहिं चराचर सृष्टि भवानी। देहिं मुक्ति प्रद वर सुखु मानी॥
विद्या परा मोक्ष सुखधामिनि। देवि सनातनि सब सुर स्वामिनि॥
सुनि नृप बोलि उठेउ ऋषिराया। काहि कहउ पुनि-पुनि महामाया॥
कवन देवि प्रकटी केहि भाँती। चरित कहउ मुनि विपति सँघाती॥
कस प्रभाव कस सहज सरूपा। ऋषि कह जगत रूप ते भूपा॥
नित्य रूप व्यापहिं जग माहीं। कहहु सो ठाउँ देवि जहँ नाहीं॥

दोहा- सुर कारज सारन कहुँ जब प्रकटइ जग माहिं।
तब जानइ अवतार जग यामे संशय नाहिं॥ ६॥

एक भयउ यहि विधि अवतारा। प्रलय काल जल ही जल सारा॥

तथा कुछ जीव ऐसे हैं, जो दिन और रात्रि में बराबर ही देखते हैं। यह ठीक है कि मनुष्य समझदार होते हैं किंतु केवल वे ही ऐसे नहीं होते। पशु, पक्षी और मृग आदि सभी प्राणी समझदार होते हैं। मनुष्यों की समझ भी वैसी ही होती है, जैसी उन मृग और पक्षियों की होती है, तथा जैसी मनुष्यों की होती है, वैसी ही उन मृग-पक्षी आदि की होती है। ५। यह तथा अन्य बातें भी प्राय: दोनों में समान ही हैं। समझ होने पर भी इन पक्षियों को तो देखो, ये स्वयं भूख से पीड़ित होते हुए भी मोह वश बच्चों की चोंच में कितने चाव से अन्न के दाने डाल रहे हैं। नरश्रेष्ठ क्या तुम नहीं देखते कि ये मनुष्य समझदार होते हुए भी लोभवश अपने किये हुए उपकार का बदला पाने के लिये पुत्रों की अभिलाषा करते हैं ? यद्यपि उन सबमें समझ की कमी नहीं है, तथापि वे संसार की स्थिति जन्म-मरण की परम्परा बनाये रखने वाले भगवती महामाया के प्रभाव द्वारा ममता मय भँवर से युक्त मोह के गहरे गर्त में गिराये गये हैं। इसलिये इसमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये। जगदीश्वर भगवान् विष्णु की योगनिद्रारूपा जो भगवती महामाया हैं,उन्हीं से यह जगत् मोहित हो रहा है। वे भगवती महामाया देवी ज्ञानियों के भी चित्त को बलपूर्वक खींचकर मोह में डाल देती हैं। वे ही इस सम्पूर्ण चराचर जगत् की सृष्टि करती हैं तथा वे ही प्रसन्न होने पर मनुष्यों को मुक्ति के लिये वरदान देती हैं।



शेष सेज सोवहिं सुरत्राता । मधु कैटभ उपजे विख्याता॥
विष्णु श्रवण मल ते तनु धारे । वधन्ह चहत विधि कहुँ मतवारे॥
सोवहिं जदपि सकल जग त्राता । नाभि कमल महुँ बसहिं विधाता॥
विष्णु योग निद्रहिं मन लाई । स्तुति करहिं विरंचि बनाई॥
विश्वेश्वरी विश्व धारिणी । पालन अरु संहार कारिणी॥
तेजरूप हरि शक्ति बहोरी । निद्रा देविहिं कहेउ निहोरी॥
तुम स्वाहा तुम स्वधा भवानी। वषट्कार स्वर मानहिं ज्ञानी॥
सुधा त्वमक्षर नित्य त्रिधामय । अनुच्चार्य अधमात्रा जानय॥

दोहा- अरध मात्रा रूप महुँ घट घट व्यापहु मात।
यह रहस्य जानहिं विबुध सुमिरत चित हरषात॥ ७॥

तुम संध्या सावित्री माता। धारहु जगत सृजहु सुखदाता॥
उत्पति समय सृष्टि सुखरूपा। पालन कहुँ स्थिति स्वरूपा॥
कल्प अंत सब जगत नशाया। तुम्हीं महाविद्या महामाया॥
तुम्हैं महामेधा जग जानै। महास्मृति तुम कहँ पहिचानै॥

वे ही परा विद्या संसार-बन्धन और मोक्ष की हेतुभूता सनातनी देवी तथा सम्पूर्ण ईश्वरों की भी अधीश्वरी हैं।

राजा ने पूछा-भगवन् जिन्हें आप महामाया कहते हैं, वे देवी कौन हैं ? ब्रह्मन् उनका आविर्भाव कैसे हुआ ? तथा उनके चरित्र कौन-कौन हैं ? ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ महर्षे उन देवी का जैसा प्रभाव हो, जैसा स्वरूप हो और जिस प्रकार प्रादुर्भाव हुआ हो, वह सब मैं आपके मुख से सुनना चाहता हूँ।

ऋषि बोले-राजन् वास्तव में तो वे देवी नित्य स्वरूपा ही हैं। सम्पूर्ण जगत् उन्हीं का रूप है तथा उन्होंने समस्त विश्व को व्याप्त कर रखा है, तथापि उनका प्राकट्य अनेक प्रकार से होता है। वह मुझसे सुनो। यद्यपि वे नित्य और अजन्मा हैं, तथापि जब देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये प्रकट होती हैं, उस समय लोक में उत्पन्न हुई कहलाती हैं। ६। कल्प के अन्त में जब सम्पूर्ण जगत् एकार्णव में निमग्न हो रहा था और सबके प्रभु भगवान् विष्णु शेषनाग की शय्या बिछाकर योगनिद्रा का आश्रय ले सो रहे थे,उस समय उनके कानों के मैल से दो भयंकर असुर उत्पन्न हुए, जो मधु और कैटभ के नाम से विख्यात थे। वे दोनों ब्रह्मा जी का वध करने को तैयार हो गये। भगवान् विष्णु के नाभिकमल में विराजमान



तुम्हीं महामोहा महादेवी । महासुरी तुम सब सुर सेवी ॥
प्रकृती तुम्हीं त्रिगुण उपजावहु । काल रात्रि महारात्रि कहावहु ॥
मानहिं मोहरात्रि तुम्हैं ज्ञानी । त्वंश्री त्वं ईश्वरी भवानी ॥
त्वं ह्री बुद्धिः बोध स्वरूपा । लज्जा पुष्टि तुष्टि सुख रूपा ॥

दोहा- शांति क्षांति खड्गिनि तथा शूलिनि घोरा मात।
शंख चक्र गदा चाप शर परिघ भुसुंडि सोहात।। ८।।

तुम्हहीं सौम्य सौम्य तर माई । तुम सम कहँ जग सुंदरताई ॥
आप परापर पर परमेश्वरि । सर्व स्वरूप सद् असद् ईश्वरि ॥
सृजहिं जे जग पालहिं संहारहिं । कर्यौ नींद वश तिन्ह करतारहिं ॥
तुम्हरी कृपा धरहिं तनु हरि हर। तुम सम को त्रैलोक शक्ति धर ॥
स्तुति करौं कवन विधि तोरी। हरहु दया करि विपदा मोरी ॥
मधु कैटभहिं मोह महुँ डारी। करहु प्रबोध उठैं हरि हारी ॥
प्रेरहु हरिहिं वधहिं एहि काला । मधु कैटभ युगदैत्य विशाला ॥
एहि विधि स्तुति कीन्हि निहोरी। बोले ऋषि सोइ चरित बहोरी ॥

प्रजापति ब्रह्माजी ने जब उन दोनों भयानक असुरों को अपने पास आया और भगवान् को सोया हुआ देखा, तब एकाग्रचित्त होकर उन्होंने भगवान् विष्णु को जगाने के लिये उनके नेत्रों में निवास करने वाली योगनिद्रा का स्तवन आरम्भ किया। जो इस विश्व की अधीश्वरी, जगत् को धारण करने वाली, संसार का पालन और संहार करने वाली तथा तेज स्वरूप भगवान विष्णु की अनुपम शक्ति हैं, उन्हीं भगवती निद्रा देवी की भगवान् ब्रह्मा स्तुति करने लगे।

ब्रह्माजी ने कहा-देवि तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं स्वधा और तुम्हीं वषट्कार हो। स्वर भी तुम्हारे ही स्वरूप हैं। तुम्हीं जीवनदायिनी सुधा हो। नित्य अक्षर प्रणव में अकार, उकार, मकार-इन तीनों मात्राओं के रूप में तुम्हीं स्थित हो तथाा इन तीन मात्राओं के अतिरिक्त जो बिन्दु रूपा नित्य अर्धमात्रा है, जिसका विशेष रूप से उच्चारण नहीं किया जा सकता, वह भी तुम्हीं हो। ७। देवि तुम्हीं संध्या, सावित्री तथा परम जननी हो। देवि तुम्हीं इस विश्व-ब्रह्माण्ड को धारण करती हो। तुमसे ही इस जगत् की सृष्टि होती है। तुम्हीं से इसका पालन होता है और सदा तुम्हीं कल्प के अन्त में सबको अपना ग्रास बना लेती हो। जगन्मयी देवि इस जगत् की उत्पत्ति के समय तुम सृष्टि रूपा हो, पालन-काल में स्थिति रूपा हो तथा



दोहा- नेत्र नासिका बाहु उर तजि तामसि हरि अंग।
प्रकट भई सम्मुख जबहिं जागे तबहिं त्रिभंग।। ९।।

नयन उघारि जगत पति देखा। जल मय सकल पसार विशेषा॥
तबहिं दीख मधु कैटभ सोऊ। अतिबल क्रोध रक्त दृग दोऊ॥
ताकहिं विधिहिं असुर युग कैसे। गरुड़ सकोप व्याल कहुँ जैसे॥
तब उठि ठाढ़ भए सुर स्वामी। असुर निहारि भिरे रणकामी॥
बाहु युद्ध अस भयउ भयंकर। पाँच हजार वर्ष लगि दुष्कर॥
ते युग असुर जदपि भटमानी। अति उन्मत्त महा अभिमानी॥
महामाइ माया अस मोहै। कहहिं भिरै मो सन जग को है॥
तव वीरता देखि मन माना। चाहहुँ तुम्हहिं देन वरदाना॥

दोहा- जौं प्रसन्न तुम मो पर बिहँसि कहहिं भगवान।
मोरे कर पावहु मरण देहु इहै वरदान॥

छं- मन महुँ विचारि निहारि जल मय सकल जगत पसार यों।
तुम मोहिं मारहु भूमि पै जहँ जल न होइ अधार यों॥

कल्पान्त के समय संहार रूप धारण करने वाली हो। तुम्हीं महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोहरूपा, महादेवी और महासुरी हो। तुम्हीं तीनों गुणों को उत्पन्न करने वाली सबकी प्रकृति हो। भयंकर कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि भी तुम्हीं हो। तुम्हीं श्री, तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं ह्री और तुम्हीं बोधस्वरूपा बुद्धि हो। लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो। तुम खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोररूपा तथा गदा, चक्र, शंख और धनुष धारण करने वाली हो। बाण, भुशुण्डी और परिघ-ये तुम्हारे अस्त्र हैं। ८। तुम सौम्य और सौम्यतर हो-इतना ही नहीं, जितने भी सौम्य एवं सुन्दर पदार्थ हैं, उन सबकी अपेक्षा तुम अत्यधिक सुन्दरी हो। पर और अपर-सबसे परे रहने वाली परमेश्वरी तुम्हीं हो। सर्वस्वरूपे देवि ? कहीं भी सत्-असत्रूप जो कुछ वस्तुएँ हैं और उन सबकी जो शक्ति है, वह तुम्हीं हो। ऐसी अवस्था में तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है ? जो इस जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन भगवान् को भी जब तुमने निद्रा के अधीन कर दिया है, तब तुम्हारी स्तुति करने में यहाँ कौन समर्थ हो सकता है ? मुझको, भगवान् शंकर को तथा भगवान् विष्णु को तुमने ही शरीर धारण कराया है अत: तुम्हारी स्तुति करने की शक्ति किसमें है ? देवि तुम तो अपने इन उदार प्रभावों से ही प्रशंसित हो। ये जो दोनों दुर्धर्ष असुर मधु और



कहिकै तथास्तु सहर्ष हरि यों हहरि उर पाटत भए।
गहि असुर शिर धरि जघन पै निज चक्र सों काटत भए॥

दोहा- स्तुति कीन्हि विरंचि जब तब प्रकटी महामाइ।
आगिल चरित सुनहु नृप कहन लाग ऋषिराइ।। १०।।

प्रथम अध्याय संपूर्ण

कैटभ हैं, इनको मोह में डाल दो और जगदीश्वर भगवान् विष्णु को शीघ्र ही जगा दो। साथ ही इनके भीतर इन दोनों महान् असुरों को मार डालने की बुद्धि उत्पन्न कर दो।

ऋषि कहते हैं-राजन् जब ब्रह्मा जी ने वहाँ मधु और कैटभ को मारने के उद्देश्य से भगवान् विष्णु को जगाने के लिये तमोगुण की अधिष्ठात्री देवि योगनिद्रा की इस प्रकार स्तुति की, तब वे भगवान् के नेत्र, नासिका, बाहु, हृदय और वक्ष:स्थल से निकलकर अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजी की दृष्टि के समक्ष खड़ी हो गयीं। योगनिद्रा से मुक्त होने पर जगत के स्वामी भगवान जनार्दन उस एकार्णव के जल में शेषनाग की शय्या से जाग उठे। ९। फिर उन्होंने उन दोनों असुरों को देखा। वे दुरात्मा मधु और कैटभ अत्यन्त बलवान् तथा पराक्रमी थे और क्रोध से लाल आँखें किये ब्रह्माजी को खा जाने के लिये उद्योग कर रहे थे। तब भगवान् श्रीहरि ने उठकर उन दोनों के साथ पाँच हजार वर्षों तक केवल बाहुयुद्ध किया। वे दोनों भी अत्यन्त बल के कारण उन्मत्त हो रहे थे। इधर महामाया ने भी उन्हें मोह में डाल रखा था इसलिये वे भगवान् विष्णु से कहने लगे-हम तुम्हारी वीरता से संतुष्ट हैं। तुम हम लोगों से कोई वर माँगो।

श्रीभगवान् बोले-यदि तुम दोनों मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथ से मारे जाओ। बस, इतना-सा ही मैंने वर माँगा है। यहाँ दूसरे किसी वर से क्या लेना है।

ऋषि कहते हैं-इस प्रकार धोखे में आ जाने पर जब उन्होंने सम्पूर्ण जगत् में जल-ही-जल देखा, तब कमलनयन भगवान् से कहा-जहाँ पृथ्वी जल में डूबी हुई न हो जहाँ सूखा स्थान हो, वहीं हमारा वध करो।

ऋषि कहते हैं-तब तथास्तु कहकर शंख, चक्र और गदा धारण करने वाले भगवान ने उन दोनों के मस्तक अपनी जाँघ पर रखकर चक्र से काट डाले। इस प्रकार ये देवी महामाया ब्रह्माजी की स्तुति करने पर स्वयं प्रकट हुई थीं। अब पुनः तुमसे उनके प्रभाव का वर्णन करता हूँ, सुनो। १०।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में मधु-कैटभ-वध नामक पहला अध्याय पूरा हुआ।



श्री

दूसरा अध्याय




शुभ
लाभ

दूसरा अध्याय

विनियोग

मध्यम चरित्र के विष्णु ऋषि, महालक्ष्मी देवता, उष्णिक् छन्द, शाकम्भरी शक्ति, दुर्गा बीज, वायु तत्त्व और यजुर्वेद स्वरूप है। श्रीमहालक्ष्मी की प्रसन्नता के लिये मध्यम चरित्र के पाठ में विनियोग करता हूँ। (ऐसा पढ़कर थोड़ा जल जमीन पर छोड़े)

ध्यान

दोहा- कमलासिनि सस्मित मुखी महिष मर्दिनी खास।
अक्ष माल फरसा गदा वाण बज्र अरु पास॥
पद्म धनुष कर कुंडिका दंड शक्ति असि ढाल।
शंख चक्र मधुपात्र कर घंटा शूल विशाल॥

पुनि बोले ऋषिवर हरषाई। सुनहु सुरथ शुचि कथा सुहाई॥
एक बार सुर असुर सकामा। लरे भयंकर अति संग्रामा॥
शत वर्षीय भयउ रण भारी। भई विपरीत सुरन्ह कहुँ रारी॥
असुराधिप महिषासुर वीरा। इंद्रहिं जितेउ समर रणधीरा॥

ध्यान-मैं कमल के आसन पर बैठी हुई प्रसन्न मुख वाली महिषासुरमर्दिनी भगवती महालक्ष्मी का भजन करता हूँ, जो अपने हाथों में अक्षमाला, फरसा, गदा, बाण, वज्र, पद्म, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, खड्ग, ढाल, शंख, घण्टा मधुपात्र, शूल, पाश और चक्र धारण करती हैं।

ऋषि कहते हैं-पूर्वकाल में देवताओं और असुरों में पूरे सौ वर्षों तक घोर संग्राम हुआ था। उसमें असुरों का स्वामी महिषासुर था और देवताओं के नायक इन्द्र थे। उस युद्ध में देवताओं की सेना महाबली असुरों से परास्त हो गयी। सम्पूर्ण देवताओं को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा। तब पराजित देवता प्रजापति ब्रह्माजी को आगे करके उस स्थान पर गये, जहाँ भगवान् शंकर और विष्णु विराजमान थे। देवताओं ने महिषासुर के पराक्रम तथा अपनी पराजय का यथावत् वृत्तान्त उन दोनों देवेश्वरों से विस्तारपूर्वक कह सुनाया। वे बोले-भगवन्! महिषासुर सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरुण तथा अन्य देवताओं के भी अधिकार छीनकर स्वयं ही सबका अधिष्ठाता बना बैठा है। उस दुरात्मा महिष ने समस्त देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया है। अब वे मनुष्यों की भाँति पृथ्वी पर विचरते हैं।



सुरन्ह जीति बैठेउ सिंहासन । भयउ महाभय क्रूर प्रशासन ॥
पहुँचे सुर विरंचि अगुवाई । जहँ बैठे हरि हर सुखदाई ॥
सकल पराजय कही पुकारी । जेहि विधि पद छीनेसि असुरारी ॥
प्रभु सुरेश रवि अनल अनिल कर। शशि यम वरुण सकल पद सुंदर ॥
सकल प्रशासन स्वयं सँवारी । सुरन्ह स्वर्ग ते दीन्ह निकारी ॥
भटकत फिरहिं नरन्ह की नाईं । करहु उपाय जो शोक नशाई ॥
सुर सभीत आए शरनाई । होहु कृपा करि वेगि सहाई ॥
सुनि सुर व्यथा कुपित भए हरि हर । भृकुटि कुटिल मुख वक्र युगलकर ॥
दोहा- विष्णु आदि सब सुरन्ह के मुख सों तेज अपार।
निकसि भयउ एकत्र जहँ लाग प्रकाश पहार ॥ १ ॥
यह आलोक सकल दिशि गयऊ । नारि स्वरूप तेज तब लयऊ ॥
शिव तेजस प्रकटेउ मुख मंडल। केश भए यम तेज सकल मिल ॥
भुज भगवान विष्णु के अंशा । चंद्र तेज स्तन अवतंशा ॥
इंद्रभाग सों कटि प्रदेशा । वरुण तेज जंघोरु विशेषा ॥

दैत्यों की यह सारी करतूत हमने आप लोगों से कह सुनायी। अब हम आपकी ही शरण में आये हैं। उसे वध का कोई उपाय सोचिये।

इस प्रकार देवताओं के वचन सुनकर भगवान् विष्णु और शिव ने दैत्यों पर बड़ा क्रोध किया। उनकी भौहें तन गयीं और मुँह टेढ़ा हो गया। तब अत्यन्त कोप में भरे हुए चक्रपाणि श्रीविष्णु के मुख से एक महान् तेज प्रकट हुआ। इसी प्रकार ब्रह्मा, शंकर तथा इन्द्र आदि अन्यान्य देवताओं के शरीर से भी बड़ा भारी तेज निकला। वह सब मिलकर एक हो गया। महान् तेज का वह पुंज जाज्वल्यमान पर्वत-सा जान पड़ा। १। देवताओं ने देखा, वहाँ उसकी ज्वालाएँ सम्पूर्ण दिशाओं में व्याप्त हो रही थीं। सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से प्रकट हुए उस तेज की कहीं तुलना नहीं थी। एकत्रित होने पर वह एक नारी के रूप में परिणत हो गया और अपने प्रकाश से तीनों लोकों में व्याप्त जान पड़ा। भगवान् शंकर का जो तेज था, उससे उस देवी का मुख प्रकट हुआ। यमराज के तेज से उसके सिर में बाल निकल आये। श्रीविष्णु भगवान् के तेज से उसकी भुजाएँ उत्पन्न हुईं।

चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तनों का और इन्द्र के तेज से मध्यभाग कटिप्रदेश का



भयउ नितंब भूमि कर भागा। विधि कर तेज चरन महुँ लागा॥
पादांगुली तेज दिनकर को। हस्तांगुली अष्ट वसु वर को॥
भई कुवेर तेजस सों नासा। अंश प्रजापति दसन विकासा॥
पावक तेज त्रिनयन स्वरूपा। संध्या सों भई भौंह अनूपा॥
श्रवन समीर तेज सों जाए। सुरन्ह तेज सब अंग बनाए॥
देखि सुरेश्वरि सुर हरषाने। प्रकट स्वरूप बिलोकि जुड़ाने॥
शंभु दीन्ह तेहि शूल विशाला। चक्र चक्रधर ईश कृपाला॥
शंख वरुण पुनि शक्ति हुताशन। भरि तरकस इषु पवन सरासन॥

दोहा- वज्र दीन्ह सुरराज तब सब बिधि सुखद विचार।
ऐरावत सों घंट लै देविहिं दियो सँवार।। २।।

तब यम दीन्ह दंड लै सादर। पाश दीन्ह जलनाथ गुणाकर॥
अक्षमाल लै दियो प्रजापति। दीन्ह विरंचि कमंडलु भूपति॥
आपन तेज सूर्य विस्तारी। रोम कूप महुँ भरेउ सँवारी॥
काल दीन्हि एक खड्ग सुधारी। चमचमात अति उत्तम धारी॥

प्रादुर्भाव हुआ। वरुण के तेज से जंघा और पिंडली तथा पृथ्वी के तेज से नितम्ब भाग प्रकट हुआ। ब्रह्मा के तेज से दोनों चरण और सूर्य के तेज से उनकी अँगुलियाँ हुईं। वसुओं के तेज से हाथों की अँगुलियाँ और कुबेर के तेज से नासिका प्रकट हुई। उस देवी के दाँत प्रजापति के तेज से और तीनों नेत्र अग्नि के तेज से प्रकट हुए थे। उसकी भौंहें संध्या के और कान वायु के तेज से उत्पन्न हुए थे। इसी प्रकार अन्यान्य देवताओं के तेज से भी उस कल्याणमयी देवी का आविर्भाव हुआ।

तदनन्तर समस्त देवताओं के तेज पुंज से प्रकट हुई देवी को देखकर महिषासुर के सताये हुए देवता बहुत प्रसन्न हुए। पिनाकधारी भगवान् शंकर ने अपने शूल से एक शूल निकालकर उन्हें दिया, फिर भगवान् विष्णु ने भी अपने चक्र से चक्र उत्पन्न करके भगवती को अर्पण किया। वरुण ने भी शंख भेंट किया, अग्नि ने उन्हें शक्ति दी और वायु ने धनुष तथा बाण से भरे हुए दो तरकस प्रदान किये। सहस्त्र नेत्रों वाले देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से वज्र उत्पन्न करके दिया और ऐरावत हाथी से उतारकर एक घण्टा भी प्रदान किया। २। यमराज ने कालदण्ड से दण्ड, वरुण से पाश, प्रजापति से स्फटिकाक्ष की माला तथा ब्रह्मा जी ने कमण्डलु भेंट किया। सूर्य ने देवी के समस्त रोम-कूपों में अपनी किरणों का तेज भर दिया।



क्षीर सिंधु एक हार सुहावन। दीन्ह दिव्य पट युग नित नूतन॥
अरध चंद्र चूड़ामणि कुंडल। कर केयूर सुनूपुर निर्मल॥
हँसली कंठ दई शुभ चीन्ही। सर्वांगुलिषु मुद्रिका दीन्ही॥
सादर परशु दीन्ह विश्वकर्मा। कमल माल नित नूतन धर्मा॥
अस्त्र अनेक दीन्ह हरषाई। कवच अभेद्य सदा सुखदाई॥
जलधि कमल कर सुंदर फूला। सिंह हिमालय सब सुख मूला॥
रत्न अनेक दीन्ह हिमवाना। मधु भरि पात्र कुवेर सुजाना॥
शेष दीन्ह सुंदर उपहारा। नागहार मणि भूषित सारा॥
सकल सुरन्ह मिलि साज सँवारे। अस्त्र शस्त्र पट भूषण सारे॥
कोटि प्रकार पाइ सम्माना। गर्जीं देवि न शून्य समाना॥

दोहा- सिंधु सभय डोली धरा थर थर करहिं पहार।
अट्टहास अति घोर सुनि काँप उठा संसार।। ३ ।।

पुनि पुनि निरखहिं सुर समुदाई। कहहिं तुम्हारि जयति जय माई॥
देविहिं देखि देव हरषाने। कहि न सकहिं सुख नयन जुड़ाने॥

काल ने उन्हें चमकती हुई ढाल और तलवार दी। क्षीरसमुद्र ने उज्ज्वल हार तथा कभी जीर्ण न होने वाले दो दिव्य वस्त्र भेंट किये। साथ ही उन्होंने दिव्य चूड़ामणि, दो कुण्डल, कड़े, उज्ज्वल अर्धचन्द्र, सब बाहुओं के लिए केयूर, दोनों चरणों के लिये निर्मल नूपुर, गले की सुन्दर हँसली और सब अँगुलियों में पहनने के लिये रत्नों की बनी अँगूठियाँ भी दीं। विश्वकर्मा ने उन्हें अत्यन्त निर्मल फरसा भेंट किया। साथ ही अनेक प्रकार के अस्त्र और अभेद्य कवच दिये, इनके सिवा मस्तक और वक्ष:स्थल पर धारण करने के लिये कभी न कुम्हलाने वाले कमलों की मालाएँ दीं। जलधि ने उन्हें सुन्दर कमल का फूल भेंट किया। हिमालय ने सवारी के लिये सिंह तथा भाँति-भाँति के रत्न समर्पित किये। धनाध्यक्ष कुबेर ने मधु से भरा पानपात्र दिया तथा सम्पूर्ण नागों के राजा शेष ने, जो इस पृथ्वी को धारण करते हैं, उन्हें बहुमूल्य मणियों से विभूषित नागहार भेंट दिया। इसी प्रकार अन्य देवताओं ने भी आभूषण और अस्त्र-शस्त्र देकर देवी का सम्मान किया। तत्पश्चात उन्होंने बारंबार अट्टहासपूर्वक उच्च स्वर से गर्जना की। उनके भयंकर नाद से सम्पूर्ण आकाश गूँज उठा। देवी का वह अत्यन्त उच्च स्वर से किया हुआ सिंहनाद कहीं समा न सका, आकाश उसके सामने लघु प्रतीत होने



मुनि महर्षि जानहिं सब भेऊ। स्तुति करहिं जोरि कर तेऊ॥
दैत्य सकल सुनि शोर भयंकर। धारि कवच लै उठे अस्त्र कर॥
धावा सुनि महिषासुर जोधा। शब्द लक्ष्य सँग सैन्य सक्रोधा॥
तहाँ जाइ जब देविहिं देखा। घोर प्रकाश त्रिलोक विशेषा॥
धसकी धरा चरण बल पाई। माथ मुकुट नभ रेख खिंचाई॥
धनुष शब्द सों क्षुब्ध पताला। देवि भुजन्ह सन दिशा विशाला॥

दोहा- **वरनि न जाइ विराट वपु नभ असीम लघु लाग।**
देखि देव प्रमुदित सकल भा भरोष भय भाग॥ ४॥

भईं सकल आच्छादित आशा। देवि प्रभा सों प्रकट प्रकाशा॥
एहि विधि खड़ी तहाँ जगदंबा। दैत्यन्ह सन भा युद्ध अरंभा॥
वरषहिं अस्त्र-शस्त्र दुखदायक। चिकुर महिषकर सेनानायक॥
लड़न लाग देवी सन निशिचर। चतुरंगिनी अनी सँग चामर॥
साठ सहस्त्र रथी लै आवा। दैत्य उदग्र कीन्ह रण धावा॥
कोटि रथी सँग साज बनाई। लड़ै महाहनु कठिन लड़ाई॥

लगा। उससे बड़े जोर की प्रतिध्वनि हुई, जिससे सम्पूर्ण विश्व में हलचल मच गयी और समुद्र काँप उठे। पृथ्वी डोलने लगी और समस्त पर्वत हिलने लगे। ३। उस समय देवताओं ने अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सिंहवाहिनी भवानी से कहा-देवी तुम्हारी जय हो। साथ ही महर्षियों ने भक्तिभाव से विनम्र होकर उनका स्तवन किया।

सम्पूर्ण त्रिलोकी को क्षोभग्रस्त देख दैत्यगण अपनी समस्त सेना को कवच आदि से सुसज्जित कर, हाथों में हथियार ले सहसा उठकर खड़े हो गये। उस समय महिषासुर ने बड़े क्रोध में आकर कहा-आ: यह क्या हो रहा है? फिर वह सम्पूर्ण असुरों से घिरकर उस सिंहनाद की ओर लक्ष्य करके दौड़ा और आगे पहुँचकर उसने देवी को देखा, जो अपनी प्रभा से तीनों लोकों को प्रकाशित कर रही थीं। उनके चरणों के भार से पृथ्वी दबी जा रही थी। माथे के मुकुट से आकाश में रेखा सी खिंच रही थी तथा वे अपने धनुष की टंकार से सातों पातालों को क्षुब्ध किये देती थीं। देवी अपनी हजारों भुजाओं से सम्पूर्ण दिशाओं को आच्छादित करके खड़ी थीं। ४। तदनन्तर उनके साथ दैत्यों का युद्ध छिड़ गया। नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से सम्पूर्ण दिशाएँ उद्भासित होने लगीं। चिक्षुर नामक महान्



पाँच करोड़ रथी सँग लावा। असिलोमा अति युद्ध बढ़ावा॥
साठ लक्ष सँग रथी सजाई। दैत्य बाष्कल करहि लड़ाई॥
गज सवार परिवारित निशिचर। लावा घुड़सवार दल दुस्तर॥
कोटि रथिन्ह कहुँ संग सजाई। आवा करन घोर रण भाई॥
दोहा- उमड़े असुर असंख्य अस तिन्ह कर भाग अभाग।
मिलिहि मृत्यु पावन परम वैर भाव मन लाग।। ५।।
पाँच अरब लै संग रथीवर। आयो दैत्य विडाल भयंकर॥
औरहु रथ गज वाजि सवारा। लड़ैं देवि सँग भट विकरारा॥
भिर्यौ साथ महिषासुर वीरा। विपुल सैन्य बल विकट शरीरा॥
असि कुठार पट्टिश शक्ति बल। तोमर भिंदिपाल अरु मूशल॥
अस्त्र शस्त्र एतादृश धारी। करहिं निशाचर भीषण रारी॥
खड्ग पाश कछु शक्ति चलावहिं। मातु सकल क्रीडनक नशावहिं॥
नेक न थकित न शिथिल भवानी। स्तुति करहिं देव ऋषि ज्ञानी॥
देवि ससिंह रणांगण गाजी। धुत केशर रौंदहि रण भाजी॥

असुर महिषासुर का सेनानायक था। वह देवी के साथ युद्ध करने लगा। अन्य दैत्यों की चतुरंगिणी सेना साथ लेकर चामर भी लड़ने लगा। साठ हजार रथियों के साथ उदग्र नामक महादैत्य ने लोहा लिया। एक करोड़ रथियों को साथ लेकर महाहनु नामक दैत्य युद्ध करने लगा। जिसके रोएँ तलवार के समान तीखे थे, वह असिलोमा नामका महादैत्य पाँच करोड़ रथी सैनिकों सहित युद्ध में आ डटा। साठ लाख रथियों से घिरा हुआ बाष्कल नामक दैत्य भी उस युद्धभूमि में लड़ने लगा। परिवारित नामक राक्षस हाथी सवार और घुड़सवारों के अनेक दलों तथा एक करोड़ रथियों की सेना लेकर युद्ध करने लगा। ५। बिडाल नामक दैत्य पाँच अरब रथियों से घिरकर लोहा लेने लगा। इनके अतिरिक्त और भी हजारों महादैत्य रथ, हाथी और घोड़ों की सेना साथ लेकर वहाँ देवी के साथ युद्ध करने लगे। स्वयं महिषासुर उस रणभूमि में कोटि-कोटि सहस्र रथ, हाथी और घोड़ों की सेना से घिरा हुआ खड़ा था। वे दैत्य देवी के साथ तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मूसल, खड्ग, परशु और पट्टिश आदि अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार करते हुए युद्ध कर रहे थे। कुछ दैत्यों ने उन पर शक्ति का प्रहार करके देवी को मार डालने का उद्योग किया। देवी ने भी क्रोध में भरकर खेल-खेल में ही अपने अस्त्र-शस्त्रों की



दोहा- देवि नाक निःस्वास सों प्रकटे अगनित वीर।
परशु खड्ग पट्टिश लिए भिंदिपाल रणधीर॥
भिरे असुर दल सन सकल करहिं भयंकर नाश।
युद्ध महोत्सव में कछुक वाद्य बजावहिं खास।। ६।।

अस्त्र शस्त्र सों रण विकरारा। कीन्ह मातु भीषण संहारा॥
घंटा नाद भयंकर भारी। सुनि मूर्च्छित भे कछुक दुखारी॥
कछु कुचले कछु मारि गिराए। बाँधि पाश भू पर घसिलाए॥
कछु असिघात भए दुइ खंडा। गिरे भूमि सहि गदा प्रचंडा॥
रुधिर वमहिं कछु मुशल प्रहारा। शूल घात सों वक्ष विदारा॥
विशिष वृष्टि करि कमर विदारी। सुर पीड़कन्ह भयउ रणभारी॥
कंठ भाल शिर कटि कटि गिरहीं। मध्य भग्न बिनु उर महि मरहीं॥
कर पद नयन एक अवशेषा। द्विधा कीन्ह कछु दैत्य विशेषा॥
बिनु शिर अस्त्र शस्त्र गहि मारहिं। कछु निशिचर भगवतिहिं पचारहिं॥
रथ गज वाजि असुर शव डारे। रुधिर नदी उफनाहिं किनारे॥

वर्षा करके दैत्यों के वे समस्त अस्त्र-शस्त्र काट डाले। उनके मुख पर परिश्रम या थकावट का रंचमात्र भी चिह्न नहीं था, देवता और ऋषि उनकी स्तुति करते थे और वे भगवती परमेश्वरी दैत्यों के शरीरों पर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करती रहीं।

देवी का वाहन सिंह भी क्रोध में भरकर गर्दन के बालों को हिलाता हुआ असुरों की सेना में इस प्रकार विचरने लगा, मानो वनों में दावानल फैल रहा हो। रणभूमि में दैत्यों के साथ युद्ध करती हुई अम्बिका देवी ने जितने निःश्वास छोड़े, वे सभी तत्काल सैकड़ों-हजारों गणों के रूप में प्रकट हो गये और परशु, भिन्दिपाल, खड्ग तथा पट्टिश आदि अस्त्रों द्वारा असुरों का सामना करने लगे। देवी की शक्ति से बढ़े हुए वे गण असुरों का नाश करते हुए नगाड़ा और शंख आदि बाजे बजाने लगे। उस संग्राम-महोत्सव में कितने ही गण मृदंग बजा रहे थे। ६। तदनन्तर देवी ने त्रिशूल से, गदा से, शक्ति की वर्षा से और खड्ग आदि से सैकड़ों महादैत्यों का संहार कर डाला। कितनों को घण्टे के भयंकर नाद से मूर्च्छित करके मार गिराया। बहुतेरे दैत्यों को पाश से बाँधकर धरती पर घसीटा। कितने ही दैत्य उनकी तीखी तलवार की मार से दो-दो टुकड़े हो गये। कितने ही गदा की चोट से घायल हो धरती



छंद- एहि विधि जगत जननी सशस्त्र सक्रोध अरि दल दल मलहिं।
तृण काठ के बड़ ढेर जेहि विधि वह्नि परि क्षण महुँ जलहिं।।
सिंह सँग गण घोर गर्जहिं प्राण चुनि चुनि डारहीं।
सुर गण सुमन वर्षहिं विपुल भरि हर्ष जय-जय कारहीं।।

दोहा- एहि विधि रिपुदल दल मल्यौ सुर समूह हरषाइ।
सुमन वृष्टि पुनि पुनि करहिं मातु कृपा सुखु पाइ।। ७।।

दूसरा अध्याय संपूर्ण

पर सो गये। कितने ही मूसल की मार से अत्यन्त आहत होकर रक्त वमन करने लगे। कुछ दैत्य शूल से छाती फट जाने के कारण पृथ्वी पर ढेर हो गये। उस रणांगण में बाण समूहों की वृष्टि से कितने ही असुरों की कमर टूट गयी। बाज की तरह झपटने वाले देव पीड़क दैत्यगण अपने प्राणों से हाथ धोने लगे। किन्हीं की बाँहें छिन्न-भिन्न हो गयीं। कितनों की गर्दनें कट गयीं। कितने ही दैत्यों के मस्तक कट-कटकर गिरने लगे। कुछ लोगों के शरीर मध्य भाग में ही विदीर्ण हो गये। कितने ही महादैत्य जाँघे कट जाने से पृथ्वी पर गिर पड़े। कितनों को ही देवी ने एक बाँह, एक पैर और एक नेत्रवाले करके दो टुकड़ों में चीर डाला। कितने ही दैत्य मस्तक कट जाने पर भी गिरकर फिर उठ जाते और केवल धड़ के रूप में अच्छे-अच्छे हथियार हाथ में ले देवी के साथ युद्ध करने लगते थे। दूसरे कबन्ध युद्ध के बाजों की लय पर नाचते थे। कितने ही बिना सिर के धड़ हाथों में खड्ग, शक्ति और ऋष्टि लिये दौड़ते थे तथा दूसरे-दूसरे महादैत्य ठहरो ठहरो यह कहते हुए देवी को युद्ध के लिये ललकारते थे । जहाँ वह घोर संग्राम हुआ था, वहाँ की धरती देवी के गिराये हुए रथ, हाथी, घोड़े और असुरों की लाशों से ऐसी पट गयी थी कि वहाँ चलना-फिरना असम्भव हो गया था। दैत्यों की सेना में हाथी, घोड़े और असुरों के शरीरों से इतनी अधिक मात्रा में रक्तपात हुआ था कि थोड़ी ही देर में वहाँ खून की बड़ी-बड़ी नदियाँ बहने लगीं। जगदम्बा ने असुरों की विशाल सेना को क्षण भर में नष्ट कर दिया-ठीक उसी तरह, जैसे तृण और काठ के भारी ढेर को आग कुछ ही क्षणों में भस्म कर देती है, और वह सिंह भी गर्दन के बालों को हिला-हिलाकर जोर-जोर से गर्जना करता हुआ दैत्यों के शरीरों से मानो उसके प्राण चुने लेता था। वहाँ देवी के गणों ने भी उन महादैत्यों के साथ ऐसा युद्ध किया, जिससे आकाश में खड़े हुए देवतागण उन पर बहुत संतुष्ट हुए और फूल बरसाने लगे। ७।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेय पुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में महिषासुर की सेना का वध नामक दूसरा अध्याय पूरा हुआ।



तीसरा अध्याय

दोहा- **ऋषिरुवाच बहु विधि भयउ दैत्य सैन्य संहार।**
असुर वीर आयो चिकुर करै वाण बौछार।।

वर्षहिं बिशिष सक्रोध निशाचर। मेरु शिखर जस वृष्टि भयंकर॥
जदपि भगवती कहँ भय नाहीं। लीला करन चलीं क्षन माहीं॥
वाण समूह विशाल विनाशा। विरथ कीन्ह सब असुर प्रयासा॥
वाजि वधे सारथिहु सँहारा। ध्वजा-धनुष खंडेउ करि वारा॥
बिशिष वरसि वींधे सब अंगा। व्याकुल फिरइ असुर बहु रंगा॥
विरथ वाजि धनु सारथि हीना। लरै असुर असि ढाल प्रबीना॥
देविहिं देखि बढ़्यौ रिपु कैसे। दीप शिखहिं पतंग लखि जैसे॥
तब तलवार सिंह शिर मारी। बढ़ेउ पुनः खल सोइ असि धारी॥
देवि वाम्म भुज कीन्ह प्रहारा। कर कृपाण कुंठित भइ धारा॥
टूटे असि त्रिशूल गहि धावा। भद्रकालि पर पुनः चलावा॥

ऋषि कहते हैं-दैत्यों की सेना को इस प्रकार तहस-नहस होते देख महादैत्य चिक्षुर क्रोध में भरकर अम्बिका देवी से युद्ध करने के लिये आगे बढ़ा। वह असुर रणभूमि में देवी के ऊपर इस प्रकार बाणों की वर्षा करने लगा, जैसे बादल मेरुगिरि के शिखर पर पानी की धार बरसा रहा हो तब देवी ने अपने बाणों से उसके बाण समूह को अनायास ही काटकर उसके घोड़ों और सारथि को भी मार डाला। साथ ही उसके धनुष तथा अत्यन्त ऊँची ध्वजा को भी तत्काल काट गिराया। धनुष कट जाने पर उसके अंगों को अपने बाणों से बींध डाला। धनुष, रथ, घोड़े और सारथि के नष्ट हो जाने पर वह असुर ढाल और तलवार से सिंह के मस्तक पर चोट करके देवी की भी बायीं भुजा में बड़े वेग से प्रहार किया। राजन् देवी की बाँह पर पहुँचते ही वह तलवार टूट गयी, फिर तो क्रोध से लाल आँखें करके उस राक्षस ने शूल हाथ में लिया और उसे उस महादैत्य ने भगवती भद्रकाली के ऊपर चलाया। वह शूल आकाश से गिरते हुए सूर्यमण्डल की भाँति अपने तेज से प्रज्वलित हो उठा।

उस शूल को अपनी ओर आते देख देवी ने भी शूल का प्रहार किया। उससे राक्षस के शूल के सैकड़ों टुकड़े हो गये, साथ ही महादैत्य चिक्षुर की धज्जियाँ उड़ गयीं। वह प्राणों से हाथ धो बैठा।



आवत दीख दैत्य निज ओरा। देविहु छाँड़ेउ शूल कठोरा॥

दोहा- टूक टूक करि शूल तस हरेसि असुर के प्रान।
गजारूढ़ चामर चल्यौ कीन्ह शक्ति संधान॥ १॥

जगदंबा जानहिं सब लीला। छाँड़ेसि शक्ति दैत्य बल शीला॥
भरि हुंकार भगवती भारी। आहत कीन्ह दैत्य भुवि डारी॥
टूक-टूक भइ शक्ति निहारी। चामर भरेउ क्रोध महुँ भारी॥
छाँड़ेसि शूल देखि जगदंबा। शरन्ह मारि खंडेउ अविलंबा॥
करइ असुर दल हाहाकारा। भयउ सिंह गज भाल सवारा॥
कीन्ह दैत्य सन विकट लराई। बाहु युद्ध असुरन्ह दुखदाई॥
भयउ भयंकर युद्ध अपारा। करहिं कठिन ते कठिन प्रहारा॥
गिरे भूमि पर दूनहु जोधा। तबहुँ न छाँड़हिं भिरे सक्रोधा॥
उछल्यौ सिंह गगन महुँ ऊपर। चलेउ सवेग जबहिं सो भू पर॥
कर गहि असुर शीश धड़ हीना। वधेउ चामरहिं युद्ध प्रबीना॥
दैत्य उदग्रहिं मातु सँहारा। शिला वृक्ष कर कठिन प्रहारा॥

महिषासुर के सेनापति उस महापराक्रमी चिक्षुर के मारे जाने पर देवताओं को पीड़ा देने वाला चामर हाथी पर चढ़कर आया। उसने भी देवी के ऊपर शक्ति का प्रहार किया। १। किंतु जगदम्बा ने उसे अपने हुंकार से आहत एवं निष्प्रभ करके तत्काल पृथ्वी पर गिरा दिया। अब उसने शूल चलाया, किंतु देवी ने उसे भी अपने बाणों द्वारा काट डाला। इतने में ही देवी का सिंह उछलकर हाथी के मस्तक पर चढ़ बैठा और उस दैत्य के साथ खूब जोर लगाकर बाहुयुद्ध करने लगा। वे दोनों लड़ते-लड़ते हाथी से पृथ्वी पर आ गये और अत्यन्त क्रोध में भरकर एक दूसरे पर बड़े भयंकर प्रहार करते हुए लड़ने लगे। तदनन्तर सिंह बड़े वेग से आकाश की ओर उछला और उधर से गिरते समय उसने पंजों की मार से चामर का सिर धड़ से अलग कर दिया। इसी प्रकार उदग्र भी शिला और वृक्ष आदि की मार खाकर रणभूमि में देवी के हाथ से मारा गया तथा कराल भी दाँतों, मुक्कों और थप्पड़ों की चोट से धराशायी हो गया। क्रोध में भरी हुई देवी ने गदा की चोट से उद्धत का कचूमर निकाल डाला। भिन्दिपाल से वाष्कल को तथा बाणों से ताम्र और अन्धक को मौत के घाट उतार दिया। २। तीन नेत्रों वाली परमेश्वरी ने त्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य तथा महाहनु नामक दैत्य को मार डाला। तलवार की चोट से विडाल के मस्तक को धड़ से काट गिराया। दुर्धर और



मुष्टिक दशन्ह करतलन्ह मारा । यमपुर असुर कराल सिधारा॥
पुनि सक्रोध देवी उठि धाई । उद्धत के शिर गदा चलाई॥
चूर्ण भयउ सब भाँति बिलोका । क्षण महुँ दैत्य गयउ यम लोका॥

दोहा- भिंदिपाल सों वाष्कल दीन्ह्यो वक्ष विदार।
अंधक ताम्रन्ह शरन्ह सों देवी करहिं संहार।। २।।

पुनि त्रिनेत्र धारिणि परमेश्वरि। कर गहि शूल चली सर्वेश्वरि॥
उग्रवीर्य उग्रास्यहिं मारा । दैत्य महाहनु तुरत संहारा॥
असि प्रहार सों वध्यौ विडाला । शिर धड़ पृथक कीन्ह तत्काला॥
दुर्धर दुर्मुख वाणन्ह मारे । महाबली यमलोक सिधारे॥
सैन्य संहार देखि अति आतुर । महिष रूप धार्यौ महिषासुर॥
त्रासहि देवि गणन्ह कहुँ जाई । थूथुन मारि चलै दुख दाई॥
खुर प्रहार करि काहुहिं मारे । पूछ सींघ सों अपर विदारे॥
कतहुँ वेग कहुँ सिंहनाद सों । कहुँ कहुँ चक्कर दै विषाद सों॥
कुछ निःस्वास वेग सों भारी। यहि प्रकार सेना बहु मारी॥

दुर्मुख-इन दोनों को भी अपने बाणों से यमलोक भेज दिया।

इस प्रकार अपनी सेना का संहार होता देख महिषासुर ने भैंसे का रूप धारण करके देवी के गणों को त्रास देना आरम्भ किया किन्हीं को थूथुन से मारकर, किन्हीं के ऊपर खुरों का प्रहार करके, किन्हीं-किन्हीं को पूँछ से चोट पहुँचाकर, कुछ को सींगों से विदीर्ण करके, कुछ गणों को वेग से, किन्हीं को सिंहनाद से, कुछ को चक्कर देकर और कितनों को निःश्वास वायु के झोंके से धराशायी कर दिया। इस प्रकार गणों की सेना को गिरा दिया। ३। असुर महादेवी के सिंह को मारने के लिये झपटा। इससे जगदम्बा को बड़ा क्रोध हुआ। उधर महापराक्रमी महिषासुर भी क्रोध में भरकर धरती को खुरों से खोदने लगा। तथा अपने सींगों से ऊँचे-ऊँचे पर्वतों को उठाकर फेंकने और गर्जने लगा। उसके वेग से चक्कर देने के कारण पृथ्वी क्षुब्ध होकर फटने लगी। उसकी पूँछ से टकराकर समुद्र सब ओर से धरती को डुबोने लगा। हिलते हुए सींगों के आघात से विदीर्ण होकर बादलों के टुकड़े-टुकड़े हो गये। उसके श्वास की प्रचण्ड वायु के वेग से उड़े हुए सैकड़ों पर्वत आकाश से गिरने लगे। इस प्रकार क्रोध में भरे हुए उस महादैत्य को अपनी ओर आते देख चण्डिका ने



दोहा- यहि विधि धावहि चहुँ दिशि करत घोर रिपु घात।
तदपि खेलावहिं अंबिका देखहिं खल उत्पात।। ३।।

झपटि सिंह पर मारन धायो। यहि विधि देविहिं क्रोध दिवायो॥
खनहि खुरन्ह सन भूमि विदारै। अति उत्तुंग गिरिन्ह गहि डारै॥
गर्जहि चक्कर देत विशाला। फाटन लागि भूमि तत्काला॥
पूँछ वेग सों सिंधु हिलोरै। मानहु अबहिं मेदिनी बोरै॥
हिलत डुलत जब सींघ विशाला। छिन्न भिन्न पसरी घन माला॥
श्वासोच्छ्वास वेग अति भारी। गिरिन्ह गिरावहिं व्योम मझारी॥
आवत देखि दैत्य खिसियाना। तब भगवती कोप मनमाना॥
बाँधेउ पाश डारि विकराला। सोपि महिष तन तजि ततकाला॥
प्रकटेउ सिंह रूप बरिआई। जगदंबा तब मारन धाई॥

दोहा- कर कृपाण गहि अंबिका भरे क्रोध विकराल।
असुर त्यागि तन धारेउ पुरुष रूप तत्काल।। ४।।

कर गहि असि धरि पुरुष शरीरा। विशिख वृष्टि सों बींधेउ वीरा॥

उसका वध करने के लिये महान् क्रोध किया। उन्होंने पाश फेंककर उस महान् असुर को बाँध लिया। उस महासंग्राम में बँध जाने पर उसने भैंसे का रूप त्याग दिया और सिंह के रूप में वह प्रकट हो गया। उस अवस्था में जगदम्बा ज्यों ही उसका मस्तक काटने के लिय उद्यत हुईं, त्यों ही वह खड्गधारी पुरुष के रूप में दिखायी देने लगा। ४। तब देवी ने तुरंत ही बाणों की वर्षा करके ढाल और तलवार के साथ उस पुरुष को भी बींध डाला। इतने में ही वह महान् गजराज के रूप में परिणत हो गया तथा अपनी सूँड़ से देवी के विशाल सिंह को खींचने और गर्जने लगा। खींचते समय देवी ने तलवार से सूँड़ काट डाली। तब उस महादैत्य ने पुन: भैंसे का शरीर धारण कर लिया और पहले की भाँति चराचर प्राणियों सहित तीनों लोकों को व्याकुल करने लगा। तब क्रोध में भरी हुई जगन्माता चण्डिका बारंबार उत्तम मधु का पान करने और लाल आँखें करके हँसने लगीं। उधर वह बल और पराक्रम के मद से उन्मत्त हुआ राक्षस गर्जने लगा और अपने सींगों से चण्डी के ऊपर पर्वतों को फेंकने लगा।



गज तनु धरे फिरै खल भागा। गहि करिकर मृग खींचन्ह लागा॥
ताहि देखि गर्जी जगदंबा। काटी सूँड़ न कीन्ह विलंबा॥
पुनि धरि महिष रूप खल भारी। कीन्ह चराचर जीव दुखारी॥
तब सक्रोध चंडिका कराला। रक्त नयन विकराल विशाला॥
हँसहिं हेरि हिय करि मधु पाना। उत बल मूर्च्छित दैत्य उताना॥
गर्जहिं देखि चंडिकहिं भारी। मारहि पर्वत विविध उपारी॥
अस विलोकि शर छाँड़हिं माई। चूर्ण कीन्ह गिरि धूरि मिलाई॥
मधु मद शोणित बदन विशाला। शब्द विश्रृंखल कढ़हिं कराला॥

दोहा- गर्ज गर्ज क्षण मूढ़ अब अधिक न होहि उतान।
पुनि देखब तव वीरता अबहिं करहुँ मद पान।। ५।।

गर्ज मूढ़ क्षण होसि उताना। जब तक करहुँ विरमि मद पाना॥
मोरे करन्ह मरिहि अभिमानी। सुर गरजिहहिं सकल सुखु मानी॥
अस कहि मातु उछलि गईं राऊ। असुर शरीर चढ़ीं मृदु भाऊ॥
पदन्ह दबाइ कंठ दै शूला। पुनि प्रकट्यौ मुख सन दुख मूला॥

उस समय देवी अपने बाणों के समूहों से उसके फेंके हुए पर्वतों को चूर्ण करती हुई बोलीं। बोलते समय उनका मुख मधु के मद से लाल हो रहा था और वाणी लड़खड़ा रही थी।

देवी ने कहा-ओ मूढ़ मैं जब तक मधु पीती हूँ, तब तक तू क्षण भर के लिये खूब गर्ज ले। ५। मेरे हाथ से यहीं तेरी मृत्यु हो जाने पर अब शीघ्र ही देवता भी गर्जना करेंगे।

ऋषि कहते हैं-यों कहकर देवी उछलीं और उस महादैत्य के ऊपर चढ़ गयीं। फिर अपने पैर से दबाकर उन्होंने शूल से उसके कण्ठ में आघात किया। उनके पैर से दबा होने पर भी महिषासुर अपने मुख से दूसरे रूप में बाहर होने लगा अभी आधे शरीर से ही वह बाहर निकलने पाया था कि देवी ने अपने प्रभाव से उसे रोक दिया। आधा निकला होने पर भी वह महादैत्य देवी से युद्ध करने लगा तब देवी ने बहुत बड़ी तलवार से उसका मस्तक काट गिराया। फिर तो हाहाकार करती हुई दैत्यों की सारी सेना भाग गयी तथा सम्पूर्ण देवता अत्यन्त प्रसन्न हो गये। देवताओं ने दिव्य महर्षियों के साथ दुर्गा देवी का स्तवन किया।



अपर रूप धरि निकसन्ह लागा। देवि प्रभाव न समुझ अभागा।।
रोकेउ मातु कीन्हि असि लीला । अरध स्वरूप लड़ै बल शीला।।
तब देवी उठाइ असि भारी। काटेउ मस्तक खलहिं पचारी।।
हाहाकार करत रिपु अनी। भागि सकल धरनी ढनमनी।।

दोहा- हरषि कीन्हि स्तुति सुरन्ह गावत शुचि गंधर्व।
नाचहिं खुश है अप्सरा सुख पावत जनसर्व।। ६।।

तीसरा अध्याय संपूर्ण





गन्धर्वराज गाने लगे तथा अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। ६।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में महिषासुर वध नामक तीसरा अध्याय पूरा हुआ।







चौथा अध्याय

दोहा- ऋषिरुवाच महिषासुर आदि दैत्यगन घोर।
असुर सैन्य संहार सुनि सुर प्रसन्न चहुँ ओर।।

इन्द्र आदि सुर सकल सुखारी। पहुँचे जहाँ जगत महतारी॥
करहिं प्रणाम सकल शिरु नाई। स्तुति कीन्ह बचन रचकाई॥
सकल सुरन्ह की शक्ति अनूपा। सुर महर्षि पूजित जग रूपा॥
करहुँ प्रनाम मातु पद पावन। सकल जगत दुख द्वंद्व नशावन॥
तव प्रभाव बल अनुपम देखा। केहि विधि वरनहिं विधि अज शेषा॥
ते भगवती खलन्ह कहुँ सालहिं। अशुभ नशाइ सकल जग पालहिं॥
पुण्य पुरुष गृह लक्ष्मि स्वरूपा। पापिन्ह कहुँ दरिद्र दुख रूपा॥
शुद्ध हृदय महुँ बुद्धि विशाला। सत्पुरुषन्ह श्रद्धा ततकाला॥
सोइ कुलीन महुँ लज्जा माई। करहुँ प्रनाम माथ महि लाई॥
कोटि नमन अंबिका भवानी। पालहु सकल जगत जन जानी॥

ऋषि कहते हैं-अत्यन्त पराक्रमी दुरात्मा महिषासुर तथा उसकी दैत्य-सेना के देवी के हाथ से मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता प्रणाम के लिये गर्दन तथा कंधे झुकाकर उन भगवती दुर्गा का उत्तम वचनों द्वारा स्तवन करने लगे। उस समय उनके सुन्दर अंगों में अत्यन्त हर्ष के कारण रोमांच हो आया था। देवता बोले-सम्पूर्ण देवताओं की शक्ति का समुदाय ही जिनका स्वरूप है तथा जिन देवी ने अपनी शक्ति से सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त कर रखा है, समस्त देवताओं और महर्षियों की पूजनीया उन जगदम्बा को हम भक्तिपूर्वक नमस्कार करते हैं। वे हम लोगों का कल्याण करें। जिनके अनुपम प्रभाव और बल का वर्णन करने में भगवान् शेषनाग, ब्रह्माजी तथा महादेव जी भी समर्थ नहीं हैं, वे भगवती चण्डिका सम्पूर्ण जगत का पालन एवं अशुभ भय का नाश करने का विचार करें। जो पुण्यात्माओं के घरों में स्वयं ही लक्ष्मी रूप से, पापियों के यहाँ दरिद्रता रूप से शुद्ध अन्त:करण वाले पुरुषों के हृदय में बुद्धिरूप से, सत्पुरुषों में श्रद्धारूप से तथा कुलीन मुनष्य में लज्जा रूप से निवास करती हैं, उन भगवती दुर्गा को हम नमस्कार करते हैं। देवि आप सम्पूर्ण विश्व का पालन कीजिये। १। देवि आपके इस अचिन्त्य रूप का, असुरों का नाश करने वाले भारी पराक्रम का तथा समस्त देवताओं और दैत्यों के समक्ष युद्ध में प्रकट किये



दोहा- वानर सूकर कूकर कीट पतंग बिडाल।
सकल जीव सब योनि महँ सदा रहहिं खुशहाल।। १ ।।

रूप अचिंत्य पराक्रम भारी। किमि बरनउँ देवासुर रारी॥
तव चरित्र अति अद्भुत माता। सत रज तम स्वरूप सुखदाता॥
जदपि त्रिगुण युत दोष विहीना। हरि हर पार न पाय प्रबीना॥
जग उत्पति आश्रय तुम माई। अंश तुम्हार विश्व समुदाई॥
सुरन्ह तृप्ति कारक मख जोई। देवि पुरातन स्वाहा सोई॥
पितरन्ह तृप्ति हेतु हित मानी। कहहिं तुम्हहिं कछु स्वधा भवानी॥
जो गति प्रद साधन व्रत रूपा। मुनि जन तप अभ्यास अनूपा॥
दोष रहित इंद्रिय जित जेऊ। तत्व मोक्ष प्रद मानत तेऊ॥
तुम्हीं परा विद्या महतारी। शब्द रूप वेद त्रय प्यारी॥
वेदत्रयी भगवती माता। तुम पालक जीविका विधाता॥
जगत क्लेश नाशिनि हितकारी। शास्त्र ज्ञान हित मेधा प्यारी॥
दुर्गम भव सागर जो तारै। नाव रूप धरि पार उतारै॥

हुए आपके अद्भुत चरित्रों का हम किस प्रकार वर्णन करें। आप सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति में कारण हैं आप में सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण–ये तीनों गुण मौजूद हैं , तो भी दोषों के साथ आपका संसर्ग नहीं जान पड़ता। भगवान् विष्णु और महादेव जी आदि देवता भी आपका पार नहीं पाते। आप ही सबका आश्रय हैं। यह समस्त जगत् आपका अंशभूत है, क्योंकि आप सबकी आदिभूत अव्याकृता परा प्रकृति हैं। देवि सम्पूर्ण यज्ञों में जिसके उच्चारण से सब देवता तृप्ति लाभ करते हैं, वह स्वाहा आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप पितरों की भी तृप्ति का कारण हैं, अतएव सब लोग आपको स्वधा भी कहते हैं। देवि जो मोक्ष की प्राप्ति का साधन है, अचिन्त्य महाव्रत स्वरूपा है, समस्त दोषों से रहित,जितेन्द्रिय, तत्त्व को ही सार वस्तु मानने वाले तथा मोक्ष की अभिलाषा रखने वाले मुनि जन जिसका अभ्यास करते हैं, वह भगवती परा विद्या आप ही हैं। आप शब्दस्वरूपा हैं, अत्यन्त निर्मल ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा उद्गीथ के मनोहर पदों के पाठ से युक्त सामवेद का भी आधार आप ही हैं। आप देवी, त्रयी तीनों वेद और भगवती छहों ऐश्वर्यों से युक्त हैं। इस विश्व की उत्पत्ति एवं पालन के लिये आप ही वार्ता खेती एवं आजीविका के रूप में प्रकट हुई हैं आप सम्पूर्ण जगत की घोर पीड़ा का नाश करने वाली हैं। देवि जिससे समस्त शस्त्रों के सार का ज्ञान



तुम दुर्गा आशक्ति विहीना। विष्णु हृदय महुँ बसहु प्रवीना॥
तुमहीं लक्ष्मी गौरी माई। शिव सों सम्मानित सुखदाई॥
दोहा- मुख तुम्हार सस्मित सदा पूर्ण चंद्र उजियार।
कांति कनक सम कुपित तऊ कीन्हेसि महिष प्रहार।। २।।
सोइ मुख कुपित उदयकालीना। शशि समान भृकुटी मय पीना॥
देखेसि महिष वदन विकराला। मरेउ न सो आचरज विशाला॥
समुझि कुपित यमराजहिं भारी। जीवित बचइ कहहु को झारी॥
जग हित हेतु होहु खुश माता। क्रोध तुम्हार महाभय दाता॥
अति विशाल महिषासुर सेना। जूझि गई जस चना चबेना॥
तुम्ह जेहि पर प्रसन्न जग जाना। ते पावत धन यश सनमाना॥
तिन्ह कर धरम न शिथिल सँवारा। हृष्ट पुष्ट तिय सुत परिवारा॥
धन्य जनम जगती तल तासू। पुण्य पुरुष तव कृपा प्रकाशू॥
श्रद्धा धरमवंत नर जानी। स्वर्ग लोक पहुँचाएहु प्रानी॥
दोहा- चरन कमल महुँ मन दिए करहिं अहर्निशि ध्यान।
ते निर्भय विचरहिं जगत साधक भगत सुजान।। ३।।

होता है, वह मेधाशक्ति आप ही हैं। दुर्गम भवसागर से पार उतारने वाली नौका रूप दुर्गा देवी भी आप ही हैं।

आपकी कहीं भी आसक्ति नहीं है। कैटभ के शत्रु भगवान् विष्णु के वक्ष:स्थल में एकमात्र निवास करने वाली भगवती लक्ष्मी तथा भगवान् चन्द्रशेखर द्वारा सम्मानित गौरी देवी भी आप ही हैं। आपका मुख मन्द मुस्कान से सुशोभित, निर्मल, पूर्ण चन्द्रमा के बिम्ब का अनुकरण करने वाला और उत्तम सुवर्ण की मनोहर कान्ति से कमनीय है, तो भी उसे देखकर महिषासुर को क्रोध हुआ और सहसा उसने उस पर प्रहार कर दिया, यह बड़े आश्चर्य की बात है। २। देवि वही मुख जब क्रोध से युक्त होने पर उदयकाल के चन्द्रमा की भाँति लाल और तनी हुई भौंहों के कारण विकराल हो उठा, तब उसे देखकर जो महिषासुर के प्राण तुरंत नहीं निकल गये, यह उससे भी बढ़कर आश्चर्य की बात है, क्योंकि क्रोध में भरे हुए यमराज को देखकर भला, कौन जीवित रह सकता है ? देवि आप प्रसन्न हों। परमात्मास्वरूपा आपके प्रसन्न होने पर जगत् का अभ्युदय होता है और क्रोध में भर जाने पर आप तत्काल ही कितने कुलों का सर्वनाश कर डालती हैं, यह बात अभी अनुभव में आयी है क्योंकि महिषासुर की यह विशाल सेना क्षण भर में आपके कोप से नष्ट हो गयी है। सदा अभ्युदय



इच्छित फल दाता महतारी। तुम सम को सुमिरत भय हारी॥
स्वस्थ जनन्ह कहुँ बुद्धि प्रदाता। दुख दारिद्र्य हरहु भय माता॥
तुम सम को दयालु उपकारी। असुरन्ह हनहु जगत सुखकारी॥
पापी निशिचर नरक चिन्हारी। कीन्ह सँहारि स्वर्ग अधिकारी॥
यहि विधि सुर असुरन्ह सुखदाई। सकल जगत की कीन्हि भलाई॥
मातु तुम्हहिं कछु दुर्लभ नाहीं। असुरन्ह करहु भसम छन माहीं॥
अस न कीन्ह भलि रची अहेरी। शत्रु हेतु हिय दया घनेरी॥
जिन्हहिं वध्यौ रण शस्त्र चलाए। करि पवित्र ते स्वर्ग पठाए॥
खड्ग तेज अति शूल प्रकाशा। फूट नयन नहिं शत्रु विनाशा॥
रहस गूढ़ जानइ कोउ नाहीं। तव मुख दर्शन अमिय अघाहीं॥

दोहा- सकल सृष्टि सब जीव महुँ देखहिं तुम्हहिं जे लोग।
मुकुत होत संशय रहित पाइ सकल सुख भोग॥ ४॥

प्रदान करने वाली आप जिन पर प्रसन्न रहती हैं, वे ही देश में सम्मानित हैं, उन्हीं को धन और यश की प्राप्ति होती है, उन्हीं का धर्म कभी शिथिल नहीं होता तथा वे ही अपने हृष्ट-पुष्ट स्त्री, पुत्र और भृत्यों के साथ धन्य माने जाते हैं। देवि आपकी ही कृपा से पुण्यात्मा पुरुष प्रतिदिन अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सदा सब प्रकार के धर्मानुकूल कर्म करता है और उसके प्रभाव से स्वर्गलोक में जाता है इसलिये आप तीनों लोकों में निश्चय ही मनोवांछित फल देने वाली हैं।३। माँ दुर्गे आप स्मरण करने पर सब प्राणियों का भय हर लेती हैं और स्वस्थ पुरुषों द्वारा चिन्तन करने पर उन्हें परम कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। दु:ख, दरिद्रता और भय हरने वाली देवि आपके सिवा दूसरी कौन है, जिसका चित्त सबका उपकार करने के लिये सदा ही दयार्द्र रहता हो। देवि इन राक्षसों के मारने से संसार को सुख मिले तथा ये राक्षस चिरकाल तक नरक में रहने के लिये भले ही पाप करते रहे हों, इस समय संग्राम में मृत्यु को प्राप्त होकर स्वर्गलोक में जायँ निश्चय ही यही सोचकर आप शत्रुओं का वध करती हैं। आप शत्रुओं पर शस्त्रों का प्रहार क्यों करती हैं ? समस्त असुरों को दृष्टिपात मात्र से भस्म ही क्यों नहीं कर देतीं। इसमें एक रहस्य है। ये शत्रु भी हमारे शस्त्रों से पवित्र होकर उत्तम लोकों में जायँ-इस प्रकार उनके प्रति भी आपका विचार अत्यन्त उत्तम रहता है। खड्ग के तेज पुंज



शील तुम्हार सुखद सब काहू । तजि अघ पावहिं लोचन लाहू ॥
जे जन भजहिं तुम्हहिं लय लाए । पावहिं सब सुख सहज सुभाए ॥
तव स्वभाव समुझत जग माहीं । तुलना कहाँ करहुँ केउ नाहीं ॥
सुरन्ह देत दुख राक्षस जेऊ। भागे फिरैं छिपावत भेऊ ॥
ऐसेहु असुर जो चलत उताना। भटकत फिरहिं बचावत प्राना ॥
कहँ अस बल कहँ विकट पराक्रम। सुंदर सुखद स्वरूप मनोरम ॥
हृदय दया रण महुँ निठुराई । यह सँजोग शुचि तुम महुँ माई ॥
तीनिहुँ लोक रहहिं सुखु पाए । शत्रु सँहारि स्वर्ग पहुँचाए ॥

दोहा- दैत्य सँहारे कोप करि मातु सकल सुखधाम।
निडर कीन्ह सुख दीन्ह सब मातेश्वरी प्रणाम।। ५।।

रक्षहु देवि शूल असि धारी । घंटा ध्वनि धनुष टंकारी ॥
पूरब पश्चिम दक्षिण माई । उत्तर दिशा त्रिशूल घुमाई ॥

की भयंकर दीप्ति से तथा आपके त्रिशूल के अग्रभाग की घनीभूत प्रभा से चौंधियाकर जो असुरों की आँखें फूट नहीं गयीं, उसमें कारण यही था कि वे मनोहर रश्मियों ये युक्त चन्द्रमा के समान आनन्द प्रदान करने वाले आपके इस सुन्दर मुख का दर्शन करते थे। देवि आपका शील दुराचारियों के बुरे बर्ताव को दूर करने वाला है। साथ ही यह रूप ऐसा है, जो कभी चिन्तन में भी नहीं आ सकता और जिसकी कभी दूसरों से तुलना भी नहीं हो सकती तथा आपका बल और पराक्रम तो उन दैत्यों का भी नाश करने वाला है, जो कभी देवताओं के पराक्रम को भी नष्ट कर चुके थे। ४। इस प्रकार आपने शत्रुओं पर भी अपनी दया ही प्रकट की है। वर दायिनी देवि आपके इस पराक्रम की किसके साथ तुलना हो सकती है तथा शत्रुओं को भय देने वाला एवं अत्यन्त मनोहर ऐसा रूप भी आपके सिवा और कहाँ है? हृदय में कृपा और युद्ध में निष्ठरता- ये दोनों बातें तीनों लोकों के भीतर केवल आप में देखी गयी हैं। माता आपने शत्रुओं का नाश करके इस समस्त त्रिलोकी की रक्षा की है। उन शत्रुओं को भी युद्ध भूमि में मारकर स्वर्ग लोक में पहुँचाया है तथा उन्मत्त दैत्यों से प्राप्त होने वाले हम लोगों के भय को दूर कर दिया है, आपको हमारा नमस्कार है। ५। देवि आप शूल से हमारी रक्षा करें। अम्बिके आप खड्ग से भी हमारी रक्षा करें तथा घण्टा की ध्वनि और



तिहुँ पुर फिरहु स्वरूप सँवारे। अति सुंदर विकराल तुम्हारे॥
तव कर कमल शस्त्र जे माता। खड्ग त्रिशूल गदा विख्याता॥
सब विधि रक्षा करहु हमारी। तुम समान को जग हितकारी॥
यहि विधि करि स्तुति सुखदाई। बोले ऋषि पुनि कथा सुहाई॥
दिव्य पुष्प नंदन वन केरे। चंदन आदि सुगंध घनेरे॥
धूप निवेदित करि शिरु नाए। करत प्रणाम देखि सुर भाए॥
कहेउ देवि निज निज अभिलाषा। माँगहु वेगि न धरहु निराशा॥
सुनहु मातु हम सब हरषाहीं। अब कछु कतहुँ कामना नाहीं॥
रिपु मम महिष बधेउ अभिमानी। तदपि चहहु वर देन भवानी॥
जब जब करहुँ स्मरण माता। दर्शन देति रहेउ सुखदाता॥
सब विधि संकट हरेहु हमेशा। भगत तुम्हार न सहै कलेशा॥
स्तुति करै स्तोत्र यह गाई। धन वैभव समृद्धि सुख दाई॥
संपति सकल सुखद गृह दारा। देउँ तिन्हहिं परसाद तुम्हारा॥

धनुष की टंकार से हम लोगों की रक्षा करें। चण्डिके पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशा में आप हमारी रक्षा करें तथा ईश्वरी अपने त्रिशूल को घुमाकर आप उत्तर दिशा में भी हमारी रक्षा करें। तीनों लोकों में आपके जो परम सुन्दर एवं अत्यन्त भयंकर रूप विचरते रहते हैं, उनके द्वारा भी आप हमारी तथा इस भूलोक की रक्षा करें। अम्बिके आपके कर-पल्लवों में शोभा पाने वाले खड्ग, शूल और गदा आदि जो-जो अस्त्र हों, उन सबके द्वारा आप सब ओर से हम लोगों की रक्षा करें।

ऋषि कहते हैं-इस प्रकार जब देवताओं ने जगन्माता दुर्गा की स्तुति की और नन्दन-वन के दिव्य पुष्पों एवं गन्ध-चन्दन आदि के द्वारा उनका पूजन किया, फिर सबने मिलकर जब भक्तिपूर्वक दिव्य धूपों की सुगन्ध निवेदन की, तब देवी ने प्रसन्नवदन होकर प्रणाम करते हुए देवताओं से कहा-

देवी बोलीं-देवताओं तुम सब लोग मुझसे जिस वस्तु की अभिलाषा रखते हो, उसे माँगो।

देवता बोले-भगवती ने हमारी सब इच्छा पूर्ण कर दी, अब कुछ भी बाकी नहीं है। क्योंकि हमारा शत्रु महिषासुर मारा गया। महेश्वरि इतने पर भी यदि आप हमें और वर देना चाहती हैं। तो हम जब-जब आपका स्मरण करें, तब-तब आप दर्शन देकर हम लोगों के



ऋषिरुवाच सुनु भूप सुजाना। कहि तथास्तु भई अंतर्ध्याना॥
जेहि विधि माँ त्रिभुवन हितकारिणि। सुरन्ह तेज सों स्ववस बिहारिणि॥
प्रकटीं कही कथा सो गाई। आगिल चरित सुनहु मन लाई॥
दोहा- सुर हित तथा त्रिलोक हित शुंभ निशुंभ सँहार।
गौरी तन सों प्रकट भई हरन सकल महि भार॥ ६॥

चौथा अध्याय संपूर्ण



महान् संकट दूर कर दिया करें तथा प्रसन्नमुखी अम्बिके जो मनुष्य इन स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करे, उसे वित्त, समृद्धि और वैभव देने के साथ ही उसकी धन और स्त्री आदि सम्पत्ति को भी बढ़ाने के लिये आप सदा हम पर प्रसन्न रहें।

ऋषि कहते हैं-राजन् देवताओं ने जब अपने तथा जगत् के कल्याण के लिये भद्रकाली देवी को इस प्रकार प्रसन्न किया, तब वे तथास्तु कहकर वहीं अन्तर्ध्यान हो गयीं। भूपाल इस प्रकार पूर्वकाल में तीनों लोकों का हित चाहने वाली देवी जिस प्रकार देवताओं के शरीरों से प्रकट हुई थीं, वह सब कथा मैंने कह सुनायी। अब पुनः देवताओं का उपकार करने वाली वे देवी दुष्ट दैत्यों तथा शुम्भ-निशुम्भ का वध करने एवं सब लोगों की रक्षा करने के लिये गौरी देवी के शरीर से जिस प्रकार प्रकट हुई थीं वह सब प्रसंग मेरे मुँह से सुनो। मैं उसका तुमसे यथावत् वर्णन करता हूँ। ६।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेय पुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में शक्रादिस्तुति नामक चौथा अध्याय पूरा हुआ।









पाँचवाँ अध्याय

विनियोग

इस उत्तर चरित्र के रुद्र ऋषि हैं, महासरस्वती देवता हैं, अनुष्टुप् छन्द हैं, भीमा शक्ति है, भ्रामरी बीज है, सूर्य तत्त्व है और सामदेव स्वरूप है। महासरस्वती की प्रसन्नता के लिये उत्तर चरित्र के पाठ के लिए विनियोग किया जाता है। (ऐसा पढ़कर थोड़ा जल जमीन पर छोड़े)

ध्यान

दोहा- घंटा मूशल शूल हल शंख चक्र धनु बान।
शरद पूर्णिमा शशि मुखी धारहिं शस्त्र महान॥
शुंभ आदि असुरन्ह वध्यौ त्रिभुवन की आधार।
प्रकट भई तब भगवती गौरी तन को सार॥

जय जय जय सरस्वती माता । विद्या दायिनि जग विख्याता॥
इन कर चरित सुनहु सुखदानी । कहन लाग मुनिवर विज्ञानी॥
जदपि प्रसंग अनेक सुहावन । सकल सुखद शुचि शोक नशावन॥
तदपि एक वृत्तांत पुरातन । सुनहु नृप वनिक होइ एक मन॥

ध्यान-जो अपने करकमलों में घण्टा, शूल, हल, शंख, मूसल, चक्र, धनुष और बाण धारण करती हैं, शरद् ऋतु के शोभासम्पन्न चन्द्रमा के समान जिनकी मनोहर कान्ति है, जो तीनों लोकों की आधारभूता और शुम्भ आदि दैत्यों का नाश करने वाली हैं तथा गौरी के शरीर से जिनका प्राकट्य हुआ है, उन महासरस्वती देवी का मैं निरन्तर भजन करता हूँ।

ऋषि कहते हैं-पूर्वकाल में शुम्भ और निशुम्भ नामक असुरों ने अपने बल के घमंड में आकर शचीपति इन्द्रके हाथ से तीनों लोकों का राज्य और यज्ञभाग छीन लिये वे ही दोनों सूर्य, चन्द्रमा, कुबेर, यम और वरुण के अधिकार का भी उपयोग करने लगे। वायु और अग्नि का कार्य भी वे ही करने लगे। उन दोनों ने सब देवताओं को अपमानित, राज्यभ्रष्ट, पराजित तथा अधिकारहीन करके स्वर्ग से निकाल दिया। उन दोनों महान् असुरों से तिरस्कृत देवताओं ने अपराजिता देवी का स्मरण किया और सोचा-जगदम्बा ने हम लोगों को वर दिया था कि अपात्तिकाल में स्मरण करने पर मैं तुम्हारी सब आपत्तियों का तत्काल नाश कर दूँगी। यह विचारकर देवता गिरिराज हिमालय पर गये और वहाँ भगवती विष्णुमाया की स्तुति करने लगे। १।

देवता बोले-देवी को नमस्कार है, महादेवी शिवा को सर्वदा नमस्कार है। प्रकृति व



शुंभ निशुंभ रहे दोउ भाई । महाबली अहमिति अधिकाई ॥
सुर अधिकार स्ववश करि लीन्हे । रवि शशि यम कुवेर पद छीने ॥
अनल अनिल जलपति पद पावन । इंद्र राज्य मख भाग सुहावन ॥
भ्रष्ट राज्य अधिकार विहीना । विजित फिरहिं अपमानित दीना ॥
सुरन्ह स्वर्ग सों दीन्ह निकारी । व्याकुल सब घूमहिं दुखभारी ॥
अपराजिता मातु कर ध्याना । कीन्ह चढ़ेउ चित सो वरदाना ॥
सुनहु वचन मम सुर समुदाई । करब सदैव तुम्हारि भलाई ॥
विपति काल महुँ सुमिरेहु मोही । नाशहुँ शोक सत्य कहौं तोही ॥
अस विचारि सुर गन मन माहीं । पहुँचे हिम गिरि महुँ भ्रम नाहीं ॥

दोहा- परम रम्य सुंदर सुखद दीख दिव्य स्थान ।
हरि माया कहुँ ध्यावत करहिं स्तुति गान ।। १ ।।

देवी नमः नमः महादेवी । नमः शिवायै सब जग सेवी ॥
प्रणवहुँ प्रकृतिहिं भद्रहिं स्वामिनि । माँ जगदंबहिं अंतर्यामिनि ॥
रौद्रहिं नमन करौं शिरुनाई । नित्यहिं गौरिहिं धात्रिहिं माई ॥

भद्रा को प्रणाम है। हम लोग नियमपूर्वक जगदम्बा को नमस्कार करते हैं। रौद्रा को नमस्कार है। नित्या, गौरी एवं धात्री को बारंबार नमस्कार है। ज्योत्स्नामयी, चन्द्ररूपिणी एवं सुखस्वरूपा भद्रा देवी को सतत प्रणाम है। शरणागतों का कल्याण करने वाली वृद्धि एवं सिद्धिरूपा देवी को हम बारंबार नमस्कार करते हैं। नैर्ऋती राक्षसों की लक्ष्मी, राजाओं की लक्ष्मी तथा शर्वाणी शिवपत्नी स्वरूपा आप जगदम्बा को बार-बार नमस्कार है। दुर्गा, दुर्गपारा दुर्गम संकट से पार उतारने वाली, सारा सबकी सारभूता, सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा और धूम्रादेवी को सर्वदा नमस्कार है। अत्यन्त सौम्य तथा अत्यन्त रौद्ररूपा देवी को हम नमस्कार करते हैं, उन्हें हमारा बारंबार प्रणाम है। जगत् की आधारभूता कृति देवी को बारंबार नमस्कार है। जो देवी प्राणियों में विष्णुमाया के नाम से कही जाती हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है।

जो देवी सब प्राणियों में चेतना कहलाती हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में बुद्धि रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में निद्रारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में



ज्योत्स्नामयी मातु शशि रूपा । नमः सुखायै विविध स्वरूपा ॥
कल्याण्यै प्रणवउँ शिरु नाई । सिद्धि वृद्धि स्वरूप सुखदाई ॥
नैर्ऋत्यै भूपन्ह श्री रूपहिं । पुनि प्रणवहुँ शिव शक्ति स्वरूपहिं ॥
दुर्गा देवि संकटोद्धारिणि । सार स्वरूपा जग हितकारिणि ॥
ख्याति कालिका धूम्रा माता । करहुँ प्रणाम सकल सुख दाता ॥
अति सौम्यहिं रौद्रहिं शिरु नावहुँ । जगदाधार कृतिहिं पुनि ध्यावहुँ ॥
सब प्राणिन्ह महुँ जो हरि माया । नमः नमः पुनि नमः सहाया ॥
जो चेतना सकल जग माहीं । नमः नमस्ते नमः सदाहीं ॥
बुद्धि रूप व्यापै संसारा । नमः नमस्ते नमः उदारा ॥
सब प्राणिन्ह महुँ निद्रा रूपा । नमः नमस्ते नमः अनूपा ॥
क्षुधा स्वरूप सकल जग जोई । नमन त्रय स्वीकारै सोई ॥
जो छाया स्वरूप जग माहीं । नमः नमः पुनि नमः सदाहीं ॥
शक्ति रूप व्यापै संसारा । नमः नमः नित नमन हमारा ॥
तृष्णा रूप सकल जग माता । नमः नमस्ते नमः विधाता ॥

क्षुधारूप से स्थित हैं,उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में छाया रूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में शक्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में तृष्णा रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार, उनको नमस्कार उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में क्षान्ति क्षमा रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में जाति रूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में लज्जा रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में शान्ति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में कान्तिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में लक्ष्मी रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में



क्षांति स्वरूप सकल गुण खानी । नमः नमः नित नमः भवानी ॥
जाति रूप जो जगत पसारा । नमः नमस्ते नमन हमारा ॥
लज्जा रूप रही सरसाई । नमः नमः प्रणाम पुनि माई ॥
शांति स्वरूप सकल सुखधामा । नमः नमस्ते पुनः प्रणामा ॥
माँ श्रद्धा तुम्हैं शीश झुकावउँ । नमन प्रणाम करत सुख पावउँ ॥
व्यापहि जगत कांतिमय माता । नमः नमः नित नमः विधाता ॥
लक्ष्मी रूप सकल जग सोहै । नमः नमः पुनि नमः विमोहै ॥
वृत्ति रूप शोभित सुखकारी । प्रणवहुँ नवहुँ नमन महतारी ॥
स्मृति रूप कृपामय धारा । नमः नमस्ते नमन हमारा ॥
प्रणवउँ तुम्हैं दयामय माई । नमः नमस्ते करत भलाई ॥
तुष्टि स्वरूप तोर जग जाना । नमः नमस्ते नमन विधाना ॥
मातृ रूप प्रणवहुँ सुखदायिनि । नमः नमस्ते कृपा विधायिनि ॥
भ्रांति रूप कहुँ करहुँ प्रणामा । नमः नमस्ते सब सुख धामा ॥
सकल जीवगन इंद्रिय स्वामिनि । प्रणवहुँ जग व्याप्तिहिं सुख धामिनि ॥
माँ चैतन्य रूप सुखदायिनि । नमः नमः पुनि नमः विधायिनि ॥

वृत्ति रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में स्मृतिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में दया रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में तुष्टि रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में माता रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में भ्रान्ति रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। जो जीवों के इन्द्रियवर्ग की अधिष्ठात्री देवी एवं सब प्राणियों में सदा व्याप्त रहने वाली हैं, उन व्याप्तिदेवी को बारंबार नमस्कार है। जो देवी चैतन्य रूप से इस सम्पूर्ण जगत को व्याप्त करके स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है। पूर्वकाल में अपने अभीष्ट की प्राप्ति होने से देवताओं ने जिनकी स्तुति की तथा देवराज इन्द्र ने बहुत दिनों तक जिनका सेवन किया, वह कल्याण की साधनभूता ईश्वरी हमारा कल्याण और मंगल करे तथा सारी आपत्तियों का नाश कर डालें। उद्दण्ड दैत्यों से सताये हुए हम सभी देवता जिन परमेश्वरी को इस समय नमस्कार करते हैं तथा जो भक्ति से विनम्र पुरुषों द्वारा



दोहा- इंद्र आदि सुर सेवत सफल मनोरथ जानि।
स्तुति करत अनेक विधि मातु कृपा मय मानि॥
सकल सुरन्ह निज भक्तन्ह दीन्हीं विपति विदार।
बार-बार बंदउँ तिन्हैं हरहिं कलेश हमार॥ २॥

स्तुति करत सुरन्ह जब देखा। बोले ऋषि पुनि चरित विशेषा॥
जबहिं रहे सुर स्तुति गाई। गिरिजा गंग निमज्जन आई॥
दीख सुरन्ह विरुदावली गावत। पूछेउ कहउ कवन दुख पावत॥
केहि की स्तुति करहु पुकारी। तेहि क्षण शिवा अपर वपु धारी॥
कारन कहेउ सकल समुझाई। कवन हेतु सुर करहिं बड़ाई॥
शुंभ निशुंभ दैत्य विकराला। सुरन्ह कीन्ह सब विधि बेहाला॥
फिरत तिरस्कृत सकल विचारी। तब तकि आए शरन हमारी॥
पार्वती तनु कोश निशानी। प्रकटी माँ कौशिकी भवानी॥

दोहा- पार्वती तनु कोश तें प्रकट भई जगदंब।
शुक्ल रूप भा कौशिकी शेष कालिका अंब॥ ३॥

स्मरण की जाने पर तत्काल ही सम्पूर्ण विपत्तियों का नाश कर देती हैं, वे जगदम्बा हमारा संकट दूर करें। २।

ऋषि कहते हैं-राजन् इस प्रकार जब देवता स्तुति कर रहे थे, उस समय पार्वती देवी गंगा जी के जल में स्नान करने के लिये वहाँ आयीं।

उन सुंदर भौंहों वाली भगवती ने देवताओं से पूछा-आप लोग यहाँ किसकी स्तुति करते हैं? तब उन्हीं के शरीर कोश से प्रकट हुई शिवा देवी बोलीं-शुम्भ दैत्य से तिरस्कृत और युद्ध में निशुम्भ से पराजित हो यहाँ एकत्रित हुए ये समस्त देवता यह मेरी ही स्तुति कर रहे हैं। पार्वती जी के शरीर कोश से अम्बिका का प्रादुर्भाव हुआ था, इसलिये वे समस्त लोकों में कौशिकी कही जाती हैं। कौशिकी के प्रकट होने के बाद पार्वती देवी का शरीर काले रंग का हो गया। ३। अत: वे हिमालय पर रहने वाली कालिका देवी के नाम से विख्यात हुईं। तदनन्तर शुम्भ-निशुम्भ के भृत्य चण्ड-मुण्ड वहाँ आये और उन्होंने परम मनोहर रूप धारण करने वाली अम्बिका देवी को देखा। फिर वे शुम्भ के पास जाकर बोले-महाराज एक अत्यन्त मनोहर स्त्री है, जो अपनी दिव्य कान्ति से हिमालय को प्रकाशित कर रही है।



सो तनु भयउ श्याम विख्याता । हिम गिरि बसहिं कालिका माता ॥
इहाँ कौशिकी बसहिं बिचारी । सुंदर सहज स्वरूप सुधारी ॥
शुंभ निशुंभ केर दुइ दूता । चंड मुंड विख्यात बहूता ॥
घूमन फिरन एक दिन आए । देखि कौशिकिहिं अति ललचाए ॥
सुंदरता मर्याद भवानी । कही शंभु सन जाइ बखानी ॥
एक सुंदरी हिमाचल माहीं । करत प्रकाश फिरइ भ्रम नाहीं ॥
स्वामी करत न बनइ बड़ाई । कहुँ न दीखि असि सुंदरताई ॥
कवन सो देवि पता करि भाई । ग्रहण करहु असुरेश्वर जाई ॥

दोहा- **स्त्री रत्न मनोहर अँग अँग सुखद सुबास।**
स्वतन प्रभा सों करइ सो दस दिशि प्रकट प्रकाश ।। ४ ।।

दैत्य राज चलि देखहु सोई । अस सुंदरी कतहुँ नहिं कोई ॥
मणि गज वाजि रत्न जग जेते । तुम्हरे भवन सुशोभित तेते ॥
गजन्ह माहिं हाथी ऐरावत । पारिजात तरु रत्न बतावत ॥
उच्चैः श्रवा अश्व अति सुंदर । यह सब पायउ जीति पुरंदर ॥

वैसा उत्तम रूप कहीं किसी ने भी नहीं देखा होगा। असुरेश्वर पता लगाइये, वह देवी कौन है और उसे लें लीजिये। स्त्रियों में तो वह रत्न है, उसका प्रत्येक अंग बहुत ही सुन्दर है तथा वह अपने श्री अंगों की प्रभा से सम्पूर्ण दिशाओं में प्रकाश फैला रही है । ४। दैत्यराज अभी वह हिमालय पर ही मौजूद हैं, आप उसे देख सकते हैं। प्रभो तीनों लोकों में मणि, हाथी और घोड़े आदि जितने भी रत्न हैं, वे सब इस समय आपके घर में शोभा पाते हैं। हाथियों में रत्नभूत ऐरावत, यह पारिजात का वृक्ष और उच्चैःश्रवा घोड़ा-यह सब आपने इन्द्र से ले लिया है। हंसों से जुता हुआ यह विमान भी आपके आँगन में शोभा पाता है। यह रत्नभूत अद्भुत विमान, जो पहले ब्रह्माजी के पास था, अब आपके यहाँ लाया गया है। यह महापद्म नामक निधि आप कुबेर से छीन लाये हैं। समुद्र ने भी आपको किंजल्किनी नाम की माला भेंट की है, जो केसरों से सुशोभित है और जिसके कमल कभी कुम्हलाते नहीं हैं। सुवर्ण की वर्षा करने वाला वरुण का छत्र भी आपके घर में शोभा पाता है तथा श्रेष्ठ रथ, जो पहले प्रजापति के अधिकार में था, अब आपके पास मौजूद है। दैत्येश्वर मृत्यु की उत्क्रान्तिदा नाम वाली शक्ति भी आपने छीन ली है तथा वरुण का पाश और समुद्र में होने वाले सब प्रकार के रत्न आपके भाई निशुम्भ के अधिकार में हैं। अग्नि ने भी स्वतः शुद्ध किये हुए दो



अजिर सुशोभित हंस विमाना। पायउ सो विरंचि सन जाना॥
महापद्म नामक निधि पाई। सो कुवेर सों लीन्हि छिनाई॥
किंजल्किनी कमल की माला। दीन्हि सुशोभित उदधि विशाला॥
वर्षहि कनक सकल जग लाजत। वरुण छत्र तव भवन विराजत॥
रह्यौ जो प्रथम प्रजापति पाहीं। सोइ स्यंदन अब तव गृह माहीं॥
शक्ति मृत्यु की जगत बखानी। उत्क्रांतिदा छीनि घर आनी॥
वरुण पाश वा रत्न अनेका। सिंधुज सकल एक ते एका॥
रखै निशुंभ सकल सुखदाई। कहँ लगि करौं तुम्हारि बड़ाई॥
स्वतः शुद्ध दो बसन्ह सँवारी। दीन्ह अग्नि तुम कहँ सुखकारी॥

दोहा- यहि प्रकार सब रत्न वर रखे पास सुखदानि।
स्त्री रत्न न लहहु किमि सुंदरता पहिचानि।। ५।।

यहि विधि दूत प्रबोधेसि वीरा। बोले ऋषि पुनि गिरा गँभीरा॥
चंड मुंड के वच अनुकूला। सुनेसि शुंभ लागे जनुफूला॥
महादैत्य सुग्रीव विशाला। कहेसि बुलाइ जाहु तत्काला॥
देविहिं कहब मोर संदेशा। मम हित लागि सहज उपदेशा॥

वस्त्र आपकी सेवा में अर्पित किये हैं। दैत्यराज इस प्रकार सभी रत्न आपने एकत्र कर लिये हैं फिर जो यह स्त्रियों में रत्नरूप कल्याणमयी देवी हैं, इसे आप क्यों नहीं अपने अधिकार में लेते।५।

ऋषि कहते हैं-चण्ड-मुण्ड का यह वचन सुनकर शुम्भ ने महादैत्य सुग्रीव को दूत बनाकर देवी के पास भेजा और कहा-तुम मेरी आज्ञा से उसके सामने ये बातें कहना और ऐसा उपाय करना, जिससे प्रसन्न होकर वह शीघ्र ही यहाँ आ जाय। वह दूत पर्वत के अत्यन्त रमणीय प्रदेश में, जहाँ देवी मौजूद थीं, गया और मधुर वाणी में कोमल वचन बोला।

दूत बोला-देवि दैत्यराज शुम्भ इस समय तीनों लोकों के परमेश्वर हैं। मैं उन्हीं का भेजा हुआ दूत हूँ और यहाँ तुम्हारे ही पास आया हूँ।६। उनकी आज्ञा सदा सब देवता एक स्वर से मानते हैं। कोई उसका उल्लंघन नहीं कर सकता। वे सम्पूर्ण देवताओं को परास्त कर चुके हैं। उन्होंने तुम्हारे लिये जो संदेश दिया है, उसे सुनो। सम्पूर्ण त्रिलोकी मेरे अधिकार में है। देवता भी मेरी आज्ञा के अधीन चलते हैं। सम्पूर्ण यज्ञों के भोगों को मैं ही पृथक्-पृथक् भोगता हूँ। तीनों लोकों में जितने श्रेष्ठ रत्न हैं, वे सब मेरे अधिकार में हैं। देवराज इन्द्र का



जेहि विधि सो प्रसन्न मन होई। आवै इहाँ करब तुम सोई॥
गयउ दूत सब सुनि पुनि तहवाँ। अति रमणीय ठाउँ रह जहवाँ॥
बैठी देविहिं देखि सुदेशा। कहेसि बनाइ शुंभ संदेशा॥
सुनहु देवि कछु कहउँ निहोरी। शुंभ दूत बनि आयउँ भोरी॥

दोहा- **शुंभ सकल असुराधिपति जितेसि सुरासुर झारि।**
तिन्ह कर आयसु पालहु सुंदरि बिनहिं विचारि।। ६ ।।

दैत्य राज त्रिभुवन पति अहई। मानहिं सुर जेहि कहँ जो कहई॥
कीन्ह परास्त सकल सुर सोई। तेहि कर वचन न लंघइ कोई॥
तव हित हेतु जो कहेउ सँदेशा। सुनहु सो देवि परम उपदेशा॥
त्रिभुवन बसइ मोर आधीना। मम आयसु पालहिं सुर दीना॥
पृथक-पृथक भोगहुँ मख भागा। सकल यज्ञ महुँ मम अनुरागा॥
जे वर रतन रहहिं जग माहीं। सकल मोर कछु संशय नाहीं॥
जो सुरेश वाहन ऐरावत। छीनेउँ मैं गज रतन कहावत॥
उच्चैःश्रवा सरिस हय लाई। दीन्हेउ सुरन्ह मोहिं शिरु नाई॥

वाहन ऐरावत, जो हाथियों में रत्न के समान है, मैंने छीन लिया है। क्षीरसागर का मन्थन करने से जो अश्वरत्न उच्चैःश्रवा प्रकट हुआ था, उसे देवताओं ने मेरे पैरों पर पड़कर समर्पित किया है। सुन्दरी उनके सिवा और भी जितने रत्नभूत पदार्थ देवताओं, गन्धर्वों और नागों के पास थे, वे सब मेरे ही पास आ गये हैं। ७। देवि हम लोग तुम्हें संसार की स्त्रियों में रत्न मानते हैं, अतः तुम हमारे पास आ जाओ क्योंकि रत्नों का उपभोग करने वाले हम ही हैं। चंचल कटाक्षों वाली सुन्दरी तुम मेरी या मेरे भाई महापराक्रमी निशुम्भ की सेवा में आ जाओ, क्योंकि तुम रत्नस्वरूपा हो। मेरा वरण करने से तुम्हें तुलनारहित महान् ऐश्वर्य की प्राप्ति होगी। अपनी बुद्धि से यह विचारकर तुम मेरी पत्नी बन जाओ।

ऋषि कहते हैं-दूत के यों कहने पर कल्याणमयी भगवती दुर्गा देवी, जो इस जगत् को धारण करती हैं, मन-ही-मन गम्भीर भाव से मुस्करायीं और इस प्रकार बोलीं-

देवी ने कहा-दूत तुमने सत्य कहा है, इसमें तनिक भी मिथ्या नहीं है। शुम्भ तीनों लोकों का स्वामी है और निशुम्भ भी उसी के समान पराक्रमी है, किंतु इस विषय में मैंने जो



दोहा- सुनु सुंदरी अपरमपि रत्न भूत जे द्रव्य।
सुर गंधर्व नाग ढिंग सकल मोर वश भव्य।। ७।।

अब सुंदरी मोर मत एहा। नारि रतन तुम नहिं संदेहा॥
मम उपभोग हेतु जग माहीं। सकल रतन कछु संशय नाहीं॥
अस विचारि आयहुँ हरषाई। भजहु मोहिं वा मम लघुभाई॥
नारि रत्न तुम वरहु विचारी। मोरे सँग विवाह यश कारी॥
परमैश्वर्य मिलै सुखदाई। बोले ऋषि पुनि गिरा सुहाई॥
जगत धरित्री मातु भवानी। दूत वचन सुनि मन मुसुकानी॥
कहेउ दूत सन सत्य बखाना। मिथ्या नेकु न मैं पहिचाना॥
शुंभ सकल लोकन्ह कर स्वामी। बली निशुंभ तासु अनुगामी॥

दोहा- सिख तुम्हारि सब विधि सुखद किंतु प्रतिज्ञा मोरि।
कीन्हि प्रथम अज्ञान सों सुनहु सो दूत बहोरि।। ८।।

जो जीतइ रण महुँ मोहि भाई। मम अभिमान जो देइ नशाई॥
मोरे सदृश बली रण कामी। सुनहु दूत होइहि सो स्वामी॥

प्रतिज्ञा कर ली है, उसे मिथ्या कैसे करूँ? मैंने अपनी अल्पबुद्धि के कारण पहले से जो प्रतिज्ञा कर रखी है। ८। उसे सुनो जो मुझे संग्राम में जीत लेगा, जो मेरे अभिमान को चूर्ण कर देगा तथा संसार में जो मेरे समान बलवान् होगा, वही मेरा स्वामी होगा। इसलिये शुम्भ अथवा महादैत्य निशुम्भ स्वयं ही यहाँ पधारें और मुझे जीतकर शीघ्र ही मेरा पाणिग्रहण कर लें, इसमें विलम्ब की क्या आवश्यकता है?

दूत बोला-देवि तुम घमंड में भरी हो, मेरे सामने ऐसी बातें न करो। तीनों लोकों में कौन ऐसा पुरुष है, जो शुम्भ-निशुम्भ के सामने खड़ा हो सके। देवि अन्य दैत्यों के सामने भी सारे देवता युद्ध में नहीं ठहर सकते,फिर तुम अकेली स्त्री होकर कैसे ठहर सकती हो। जिन शुम्भ आदि दैत्यों के सामने इन्द्र आदि सब देवता भी युद्ध में खड़े नहीं हुए, उनके सामने तुम स्त्री होकर कैसे जाओगी। इसलिये तुम मेरे ही कहने से शुम्भ-निशुम्भ के पास चली चलो। ऐसा करने से तुम्हारे गौरव की रक्षा होगी, अन्यथा जब वे केश पकड़कर घसीटेंगे, तब तुम्हें अपनी प्रतिष्ठा खोकर जाना पड़ेगा।

देवी ने कहा-तुम्हारा कहना ठीक है, शुम्भ बलवान् हैं और निशुम्भ भी बड़े



शुंभ निशुंभ केउ चलि आवै। जीतै शीघ्र सो व्याह रचावै॥
सो सुनि बोला दूत विचारी। भरि घमंड असि गिरा उचारी॥
शुंभ निशुंभ महा बलवाना। कहहु को पुरुष चहै रण ठाना॥
देव-दैत्य नहिं रण समुहाहीं। तुम अबला अकेलि भ्रम माहीं॥
इंद्र आदि सब सुर जे बाढ़े। भए न सम्मुख रण महुँ ठाढ़े॥
तुम सुंदरी करहु हठ नाहीं। गौरव सहित चलहु तेहि पाहीं॥
नाहीं तौ गहि कच मान बिसारी। लै जाइहि तुम कहुँ असुरारी॥

दोहा- बोलीं मैया सच कहहु यद्यपि वे बलवान।
किंतु मोर प्रण समुझि मन तिन्ह सन कहब बखान॥ ९॥

पाँचवाँ अध्याय संपूर्ण

पराक्रमी हैं, किंतु क्या करूँ? मैंने पहले बिना सोचे-समझे प्रतिज्ञा कर ली है। अतः अब तुम जाओ, मैंने तुम से जो कुछ कहा है, वह सब दैत्यराज से आदरपूर्वक कहना, फिर उन्हें जो उचित जान पड़े, करें। ९।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में देवी-दूत-संवाद नामक पाँचवाँ अध्याय पूरा हुआ।





छठवाँ अध्याय

दोहा- नागासन मणि माल युत दृग त्रय तेजस धाम।
घट सक कमल कपाल कर पद्मावतिहिं प्रणाम॥

त्रषिरुवाच शुचि सुखद प्रसंगा। कहन लाग पुनि कथा अभंगा॥
देवि वचन सुनि दूत दुखारी। अति अमर्ष महुँ व्याकुल भारी॥
पहुँचेउ दैत्य राज पहिं दूता। कहेसि वृत्त विस्तार बहूता॥
दूत बचन सुनि भड़का जोधा। बोलेउ सेनापतिहिं सक्रोधा॥
वीर धूम्र लोचन तुम धावहु। गहि कच ताहि घसीटत लावहु॥
लै सँग सैन्य जाहु बल धारी। करेउ काज मम हित अनुसारी॥
यदि गंधर्व यक्ष सुर कोई। शुभ चिंतक बनि आवे जोई॥
ताहि अवश्य वधब बल बीरा। बोले ऋषि पुनि गिरा गँभीरा॥
शुंभ सीख सेनापति पाई। चलेउ सैन्य बल लै अधिकाई॥
साठ सहस्त्र सेन सँग भेषत। गयउ तुहिन गिरि देविहिं देखत॥

ऋषि कहते हैं-देवी का यह कथन सुनकर दूत को बड़ा अमर्ष हुआ और उसने दैत्यराज के पास जाकर सब समाचार विस्तारपूर्वक कह सुनाया। दूत के उस वचन को सुनकर दैत्यराज कुपित हो उठा और दैत्यसेनापति धूम्रलोचन से बोला।

धूम्रलोचन तुम शीघ्र अपनी सेना साथ लेकर जाओ और उस दुष्ट के केश पकड़कर घसीटते हुए उसे बलपूर्वक यहाँ ले आओ। उसकी रक्षा करने के लिये यदि कोई दूसरा खड़ा हो तो वह देवता, यक्ष अथवा गन्धर्व ही क्यों न हो, उसे अवश्य मार डालना।

ऋषि कहते हैं-शुम्भ के इस प्रकार आज्ञा देने पर वह धूम्रलोचन दैत्य साठ हजार असुरों की सेना को साथ लेकर वहाँ से तुरंत चल दिया। वहाँ पहुँचकर उसने हिमालय पर रहने वाली देवी को देखा और ललकार कर कहा-अरी तू शुम्भ-निशुम्भ के पास चल। यदि इस समय प्रसन्नता पूर्वक मेरे स्वामी के समीप नहीं चलेगी तो मैं बलपूर्वक झोंटा पकड़कर घसीटते हुए तुझे ले चलूँगा। १।

देवी बोलीं-तुम्हें दैत्यों के राजा ने भेजा है, तुम स्वयं भी बलवान् हो और तुम्हारे साथ विशाल सेना भी है, ऐसी दशा में यदि मुझे बलपूर्वक ले चलोगे तो मैं तुम्हारा क्या कर सकती हूँ?



सुंदरता मर्याद निहारी। बड़ी बेर लगि रहेउ विचारी॥
केहि विधि कहहुँ सुधारि सुबानी। सरै काज निज हित पहिचानी॥
बोलेउ ठिठुकि सुनहु मम बाता। बचन मोर मानहु सुखदाता॥
शुंभ निशुंभ बीर मम स्वामी। आयउँ इहाँ देवि रणकामी॥
दोहा-अबहुँ चलहु मम स्वामि पहिं चहहु जो मन कुशलात।
नाहिं तौ चलब घसीटत झोंटा पकड़ि बलात॥ १॥
बोली देवी वचन बनाई। करब काह अस करहु जो भाई॥
भेजेउ असुरराज बलखानी। संग सेन पुनि तुम भटमानी॥
समुझि प्रसंग कही ऋषि बानी। शांत भाव महुँ रहीं भवानी॥
जासु त्रास सब जगत डेराई। तिन्ह कहँ शठ बोला धमकाई॥
पुण्यहीन कर इहै स्वभाऊ। सम्मुख मृत्यु भरोष न काऊ॥
धायउ दैत्य क्रोध भरि भारी। भस्म कीन्ह हुं शब्द उचारी॥
सहज स्वभाव सुधारि भवानी। नहिं मन हरष न शोक गलानी॥
धूम्र नयन वध सुनि सब ओरा। भयउ शोर चहुँ दिशि घन घोरा॥

ऋषि कहते हैं-देवी के यों कहने पर असुर धूम्रलोचन उनकी ओर दौड़ा, तब अम्बिका ने हुं शब्द के उच्चारण मात्र से उसे भस्म कर दिया, फिर तो क्रोध में भरी हुई दैत्यों की विशाल सेना और अम्बिका ने एक दूसरे पर तीखे सायकों, शक्तियों तथा फ़रसों की वर्षा आरम्भ की। इतने में ही देवी का वाहन सिंह क्रोध में भरकर भयंकर गर्जना करके गर्दन के बालों को हिलाता हुआ असुरों की सेना में कूद पड़ा। उसने कुछ दैत्यों को पंजों की मार से, कितनो को अपने जबड़ों से और कितने ही महादैत्यों को पटककर ओठ की दाढ़ों से घायल करके मार डाला। उस सिंह ने अपने नखों से कितनों के पेट फाड़ डाले और थप्पड़ मारकर कितनों के सिर धड़ से अलग कर दिये।

कितनों की भुजाएँ और मस्तक काट डाले तथा अपनी गर्दन के बाल हिलाते हुए उसने दूसरे दैत्यों के पेट फाड़कर उनका रक्त चूस लिया। अत्यन्त क्रोध में भरे हुए देवी का वाहन उस महाबली सिंह ने क्षण भर में ही असुरों की सारी सेना का संहार कर डाला।

शुम्भ ने जब सुना कि देवी ने धूम्रलोचन असुर को मार डाला तथा उनके सिंह ने सारी सेना का सफाया कर डाला, तब उस दैत्यराज को बड़ा क्रोध हुआ। उसका ओठ काँपने लगा। उसने चण्ड और मुण्ड नामक दो महादैत्यों को आज्ञा दी। हे चण्ड और हे



असुर सेन फिर भिड़ी विशाला । परशु शक्ति शर लै विकराला ॥
भयउ भयंकर रण छण माहीं । हाहाकार घोर भ्रम नाहीं ॥
गर्जेउ वाहन सिंह सक्रोधा। धुत केशर गाज्यो रण जोधा॥
पंजन्ह मारि विदारेसि देही । दसन्ह दाबि मारेसि कहुँ केही ॥
घायल कीन्ह पटकि भुवि भारे । कछुक नखन्ह सों उदर विदारे ॥
कर प्रहार धड़ शिर बिनु कीन्हे । कछु भुज भाल हीन हनि दीन्हे ॥
धुत केशर कुछ उदर बिदारेसि । चूँसेउ शोणित बहु विधि मारेसि ॥
वाहन सिंह क्रोध भरि भारी। असुर सेन क्षण माहिं सँहारी ॥
सुनेउ शुंभ तब उपजा क्रोधा। धूम्र नयन वध विस्मित जोधा ॥
असुर सैन्य बल सिंह सँहारा । काँपत ओठ विकल विकरारा ॥
चंड मुंड द्वै दैत्य बोलाई । कहेसि जाहु बड़ि सैन्य सजाई ॥

दोहा- **गहि कच बाँधहु ताहि तुम लावहु बिनहिं विचारि।**
जीवित मृतक ससिंह सो चहिअ मोहिं खल नारि।। २।।

छठवाँ अध्याय संपूर्ण



मुण्ड तुम लोग बहुत बड़ी सेना लेकर वहाँ जाओ, उस देवी का झोंटा पकड़कर अथवा उसे बाँधकर शीघ्र यहाँ ले आओ। यदि इस प्रकार उसको लाने में संदेह हो तो युद्ध में सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्र तथा समस्त आसुरी सेना का प्रयोग करके उसकी हत्या कर डालना। उस दुष्टा की हत्या होने तथा सिंह के मारे जाने पर उस अम्बिका को बाँधकर साथ ले शीघ्र ही लौट आना। २।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में धूम्रलोचन-वध नामक छठा अध्याय पूरा हुआ।







सातवाँ अध्याय

दोहा- जय मातंगी अंबिके श्याम वरण शशि भाल।
कर वीणा धारिणि सकल वसन सुशोभित लाल।।

यहि विधि कथा प्रसंग सुहावन। बोले ऋषि मन भावन पावन॥
आयसु मानि शुंभ कर दोऊ। चंड मुंड जानत सब कोऊ॥
चतुरंगिनी सेन लै साथा। अस्त्र शस्त्र साजे कटि भाथा॥
हिमगिरि शिखर स्वर्ण मय सुंदर। त्रिविध बयारि सुगंध मनोहर॥
परम रम्य सो अद्‌भुत धरनी। देखत बनहिं जाइ नहिं वरनी॥
पुनि जहँ रहीं विराजि भवानी। सो सुषमा किमि जाइ बखानी॥
सिंहारूढ़ मनोहर अंगा। सस्मित मुखी देखि सब संगा॥
केहि विधि पकड़ब करहिं विचारा। होहि काज सब सिद्ध हमारा॥
शर संधानि कृपाण सँवारे। पास ठाढ़ कछु खल रखवारे॥
तब कोपीं अंबिका कराला। कृष्ण वरण मुख भयउ विशाला॥

ऋषि कहते हैं-तदनन्तर शुम्भ की आज्ञा पाकर वे चण्ड-मुण्ड आदि दैत्य चतुरंगिनी सेना के साथ अस्त्रों-शस्त्रों से सुसज्जित हो चल दिये, फिर गिरिराज हिमालय के सुवर्णमय ऊँचे शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सिंहपर बैठी देवी को देखा। वे मन्द-मन्द मुस्करा रही थीं। उन्हें देखकर दैत्य लोग तत्परता से पकड़ने का उद्योग करने लगे। किसी ने धनुष तान लिया, किसी ने तलवार सँभाली और कुछ लोग देवी के पास आकर खड़े हो गये। तब अम्बिका ने उन शत्रुओं के प्रति बड़ा क्रोध किया। उस समय क्रोध के कारण उनका मुख काला पड़ गया। ललाट में भौंहें टेढ़ी हो गयीं और वहाँ से तुरंत विकरालमुखी काली प्रकट हुईं। १। जो तलवार और पाश लिये हुए थीं। वे विचित्र खट्‌वांग धारण किये और चीते के चर्म की साड़ी पहने नर-मुण्डों की माला से विभूषित थीं। उनके शरीर का मांस सूख गया था, केवल हड्डियों का ढाँचा था, जिससे वे अत्यन्त भयंकर जान पड़ती थीं। उनका मुख बहुत विशाल था, जीभ लपलपाने के कारण वे और भी डरावनी प्रतीत होती थीं। उनकी आँखें भीतर को धँसी हुई और कुछ लाल थीं, वे अपनी भयंकर गर्जना से सम्पूर्ण दिशाओं को गुँजा रही थीं।



दोहा- वक्रभृकुटि अस भाल महुँ पुनि प्रकटी जगदंब।
माँ विकराल मुखी तब काली है अविलंब।। १।।

कर कृपाण खट्वांग सँवारे। द्वीपि चर्म मुंड मालहिं धारे॥
शुष्क मांस तन अस्थि अधारा। ललन जीह लागहि विकरारा॥
बदन विशाल अंग विकरारे। नयन निमग्न रहे अरुणारे॥
गर्जन घोर कीन्ह चहुँ ओरा। गुंजित दिशा भयउ अति शोरा॥
दैत्य वीर जे जहँ भटमानी। वधहिं तिन्हहिं रण रहीं भवानी॥
गहि गहि दैत्यन्ह करहिं अहारा। भयउ चतुर्दिक हाहाकारा॥
महा महावत अंकुश धारे। पार्श्व सुरक्षक दैत्य बिचारे॥
गज अनेक घंटा सँग माई। गहि कर मुँह महुँ डारहिं लाई॥
सारथि सैनिक रथी अनेका। अश्व सस्यंदन गहि मुख फेंका॥
दसन्ह विशाल क्रोध महुँ माई। परम भयंकर जाहिं चबाई॥
गहि कर केश कंठ महुँ मारहिं। पदन्ह रौंदि हनि वक्ष संहारहिं॥
असुरन्ह अस्त्र शस्त्र जे डारे। दसन्ह दाबि करि चूर्ण पसारे॥

बड़े-बड़े दैत्यों का वध करती हुई वे कालिका देवी बड़े वेग से दैत्यों की उस सेना पर टूट पड़ीं और उन सबका भक्षण करने लगीं। वे पार्श्वरक्षकों, अंकुशधारी महावतों, योद्धाओं और घण्टासहित कितने ही हाथियों को एक ही हाथ से पकड़कर मुँह में डाल लेती थीं। इसी प्रकार घोड़े, रथ और सारथि के साथ रथी सैनिकों को मुँह में डालकर वे उन्हें बड़े भयानक रूप से चबा डालती थीं। किसी के बाल पकड़ लेतीं, किसी का गला दबा देतीं, किसी को पैरों से कुचल डालतीं और किसी को छाती के धक्के से गिराकर मार डालती थीं। वे असुरों के छोड़े हुए बड़े-बड़े अस्त्र-शस्त्र मुँह से पकड़ लेतीं और रोष में भरकर उनको दाँतों से पीस डालती थीं। काली ने बलवान् एवं दुरात्मा दैत्यों की वह सारी सेना रौंद डाली खा डाली और कितनों को मार भगाया। २। कोई तलवार के घाट उतारे गये, कोई खट्वांग से पीटे गये और कितने ही असुर दाँतों के अग्रभाग से कुचले जाकर मृत्यु को प्राप्त हुए।

इस प्रकार देवी ने असुरों की सारी सेना को क्षण भर में मार गिराया। यह देख चण्ड उन अत्यन्त भयानक काली देवी की ओर दौड़ा। महादैत्य मुण्ड ने भी अत्यन्त भयंकर बाणों



दोहा- कुपित फिरहिं जगदंब रण करत घोर हुंकार।
असुर दलहिं दल मल्यौ अस चहुँ दिसि हाहाकार।। २।।

दैत्य दुरात्मन्ह कीं सब अनी। पदन्ह सँहारि खाइ कछु हनी॥
कछु कृपाण खट्वांग सँहारे। कितनेहि दसन्ह कुचलि महि डारे॥
यहि विधि असुर सेन अति भारी। क्षण महुँ देवी दीन्हि सँहारी॥
देखहिं चंड मुंड दोउ ठाढ़े। परम क्रोध मन महुँ जे बाढ़े॥
धायउ चंड कालिकहिं देखी। मुंड चलावत विशिख विशेषी॥
चक्र चलाएसि बार हजारा। मुख समात सब बारहिं बारा॥
प्रविशत चक्र सोह तहँ कैसे। मेघ मध्य रवि मंडल जैसे॥
गरजीं घोर शब्द जगदंबा। अट्टहास करि कोपीं अंबा॥
दसन्ह प्रकाश समुज्ज्वल माई। अति विकराल वदन छवि छाई॥

दोहा- बहु विधि खलहिं खेलाइ पुनि तमकि चलीं अविलंब।
कर कृपाण धारण किए हुंकारीं जगदंब।। ३।।

कर कृपाण हं शब्द उचारा। गहि कच शीश काटि महिडारा॥

की वर्षा से तथा हजारों बाण चलाये हुए चक्रों से उन भयानक नेत्रों वाली देवी को आच्छादित कर दिया। वे अनेकों चक्र देवी के मुख में समाते हुए ऐसे जान पड़े, मानो सूर्य के बहुतेरे मण्डल बादलों के उदर में प्रवेश कर रहे हों। तब भयंकर गर्जना करने वाली काली ने अत्यन्त रोष में भरकर विकट अट्टहास किया। उस समय उनके विकराल वदन के भीतर कठिनता से देखे जा सकने वाले दाँतों की प्रभा से वे अत्यन्त उज्ज्वल दिखायी देती थीं। देवी ने बहुत बड़ी तलवार हाथ में ले हं का उच्चारण किया। ३। चण्ड के केश पकड़कर उसी तलवार से उसका मस्तक काट डाला।

चण्ड को मारा गया देखकर मुण्ड भी देवी की ओर दौड़ा, तब देवी ने रोष में भरकर उसे भी तलवार से घायल करके धरती पर सुला दिया। महापराक्रमी चण्ड और मुण्ड को मारा गया देख मरने से बची हुई बाकी सेना भय से व्याकुल हो चारों ओर भाग गयी। तदनन्तर काली ने चण्ड और मुण्ड का मस्तक हाथ में ले चण्डिका के पास जाकर प्रचण्ड अट्टहास करते हुए कहा-देवि मैंने चण्ड और मुण्ड नामक इन दो महापशुओं को तुम्हें भेंट



मारा गया चंड जब देखा। धायउ मुंड भयानक वेषा॥
आवत दीख असुर निज ओरा। देवी हनेउ ताहि असि घोरा॥
कठिन कृपाण रोष विकरारा। घायल करि मुंडहिं महि डारा॥
चंड मुंड अतुलित बल शाली। तिन्हहिं वधेउ जब क्षण महँ काली॥
अब का कुशल मोरि मन धारी। सेना व्याकुल भागि बिचारी॥
कर गहि चंड मुंड शिर दोऊ। गईं काली जहँ चण्डी सोऊ॥
अट्टहास करि विहँसीं काली। बोलीं सुनहु वचन मम आली॥
चंड मुंड द्वै पशू विशाला। लेहु भेंट देवी ततकाला॥
अब तुम युद्ध यज्ञ मन मानी। शुंभ निशुंभ वधब अभिमानी॥
ऋषिरुवाच चंडिका भवानी। काली सन बोलीं मृदुवानी॥

दोहा- चंड मुंड शिर कर लिए आइ इहाँ कुशलात।
चामुंडा इति नाम सों होहु जगत विख्यात।। ४।।

सातवाँ अध्याय संपूर्ण



किया है। अब युद्ध में तुम शुम्भ और निशुम्भ का स्वयं ही वध करना।

ऋषि कहते हैं-वहाँ लाये हुए उन चण्ड-मुण्ड नामक महादैत्यों को देखकर कल्याणमयी चण्डी ने काली से मधुर वाणी में कहा-देवि चण्ड और मुण्ड को लेकर मेरे पास आयी हो इसलिये संसार में चामुण्डा के नाम से तुम्हारी ख्याति होगी। ४।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में चण्ड-मुण्ड-वध नामक सातवाँ अध्याय पूरा हुआ।







आठवाँ अध्याय

दोहा- अरुण वरण करुणा नयन अणिमादिकन्ह महान।
पाशांकुश धनु वाण कर करहुँ भवानी ध्यान।।

बोले ऋषि पुनि वचन सुहावन। देवि चरित चर्चा अति पावन॥
भूपति सुनेसि शुंभ अभिमानी। चंड मुंड वध कीन्ह भवानी॥
अति मदमूर्च्छित व्याकुल जोधा। असुरन्ह बोल्यो बोलि सक्रोधा॥
सकल अनी सँग करहु पयाना। अजहुँ न तजइ मूढ़ अभिमाना॥
जगदंबहिं जग जननी जानी। करहि न पद सनेह अभिमानी॥
सुनि गर्जना दिशा दश काँपी। बोलेउ अहंकार वश पापी॥
षड्असीति सेना पति मोरे। दैत्य उदायुध वीर बहोरे॥
कंबु नाम सेनप चौरासी। रण बाँकुरे जाहु तजि हाँसी॥
कोटि वीर्य कुल वीर पचासा। जाहु शीघ्र सेना सजि खासा॥
शत सेनप सँग धौम्र कुलीना। कालक दौर्हृद मौर्य प्रवीना॥

ऋषि कहते हैं-चण्ड और मुण्ड नामक दैत्यों के मारे जाने तथा बहुत-सी सेना का संहार हो जाने पर दैत्यों के राजा प्रतापी शुम्भ के मन में बड़ा क्रोध हुआ और उसने दैत्यों की सम्पूर्ण सेना को युद्ध के लिये कूच करने की आज्ञा दी। वह बोला-आज उदायुध नाम के छियासी दैत्य-सेनापति अपनी सेनाओं के साथ युद्ध के लिये प्रस्थान करें। कम्बु नाम वाले दैत्यों के चौरासी सेनानायक अपनी वाहिनी से घिरे हुए यात्रा करें। पचास कोटिवीर्य-कुल के और सौ धौम्र-कुल के असुर सेनापति मेरी आज्ञा से सेना सहित कूच करें। कालक, दौर्हृद, मौर्य और कालकेय असुर भी युद्ध के लिये तैयार हो मेरी आज्ञा से तुरंत प्रस्थान करें। भयानक शासन करने वाला असुरराज शुम्भ इस प्रकार आज्ञा दे सहस्त्रों बड़ी-बड़ी सेनाओं के साथ युद्ध के लिये प्रस्थित हुआ। १। उसकी अत्यन्त भयंकर सेना आती देख चण्डिका ने अपने धनुष की टंकार से पृथ्वी और आकाश के बीच का भाग गुँजा दिया। राजन् तदनन्तर देवी के सिंह ने भी बड़े जोर-जोर से दहाड़ना आरम्भ किया, फिर अम्बिका ने घण्टे के शब्द से उस ध्वनि को और भी बढ़ा दिया। धनुष की टंकार, सिंह की दहाड़ और घण्टे की ध्वनि से सम्पूर्ण दिशाएँ गूँज उठीं। उस भयंकर शब्द से काली ने अपने विशाल मुख को और भी बढ़ा लिया तथा इस प्रकार वे विजयिनी हुईं। उस तुमुल नाद को



कालकेय यम सब सेनापति । त्वरित जाहिं रण महुँ अवाधगति ॥
सब सेनापति अनी सजाई । पहुँचहु वेगि रणांगण भाई ॥
दोहा- भैरव शासक शुंभ अस सब कहुँ आयसु दीन्ह।
स्वयं साजि चतुरंगिणी गमन समर कहँ कीन्ह ।। १ ।।
आवत देखि भयानक सेना । हँसीं चंडिका जानि चबेना ॥
जदपि भगवती जानहिं कारन । सहज चलीं सुर काज सँवारन ॥
धनुटंकोर कीन्ह अति भारी । गुंजित व्योम धरा भई सारी ॥
गर्जत सिंह घोर रव भारी । घंटा ध्वनि सों दिशा बिचारी ॥
गूँजत सकल विश्व विकराला । कीन्ह कालिका वदन विशाला ॥
तुमुल नाद सुनि दैत्य अपारा । कोपे सकल वीर वरियारा ॥
माँ चंडिका सिंह सँग काली। घेरेन्ह असुर वीर बलशाली ॥
असुर विनाश सुरन्ह हितकारी। ब्रह्मादिकन्ह शक्ति शुभकारी ॥
विधि शिव कार्तिकेय वपु पावन । विष्णु सुरेंद्र स्वरूप सुहावन ॥
जो जेहि सुर की शक्ति अनूपा। सो स्वरूप धरि पहुँचीं भूपा ॥

सुनकर दैत्यों की सेनाओं ने चारों ओर से आकर चण्डिका देवी, सिंह तथा कालीदेवी को क्रोधपूर्वक घेर लिया। राजन् इसी बीच में असुरों के विनाश तथा देवताओं के अभ्युदय के लिये ब्रह्मा, शिव, कार्तिकेय, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवों की शक्तियाँ, जो अत्यन्त पराक्रम और बल से सम्पन्न थीं, उनके शरीरों से निकलकर उन्हीं के रूप में चण्डिका देवी के पास गयीं। जिस देवता का जैसा रूप, जैसी वेश-भूषा और जैसा वाहन है, ठीक वैसे ही, साधनों से सम्पन्न हो उसकी शक्ति असुरों से युद्ध करने के लिये आयी। सबसे पहले हंसयुक्त विमान पर बैठी हुई अक्षसूत्र और कमण्डलु से सुशोभित ब्रह्माजी की शक्ति उपस्थित हुई, जिसे ब्रह्माणी कहते हैं। महादेव जी की शक्ति वृषभ पर आरूढ़ हो हाथों में श्रेष्ठ त्रिशूल धारण किये महानाग का कंकण पहने, मस्तक में चन्द्ररेखा से विभूषित हो वहाँ आ पहुँची। कार्तिकेय जी की शक्तिरूपा जगदम्बिका उन्हीं का रूप धारण किये श्रेष्ठ मयूर पर आरूढ़ हो हाथ में शक्ति लिये दैत्यों से युद्ध करने के लिये आयीं। इसी प्रकार भगवान् विष्णु की शक्ति गरुड़ पर विराजमान हो शंख, चक्र, गदा, शार्ङ्गधनुष तथा खड्ग हाथ में लिये वहाँ आयीं। २। अनुपम यज्ञवाराह का रूप धारण करने वाली श्रीहरि की जो शक्ति है, वह भी वाराह-शरीर धारण करके वहाँ उपस्थित हुई। नरसिंही शक्ति भी नृसिंह के समान शरीर धारण करके वहाँ



अतुल पराक्रम सब बल खानी । सकल सुरन्ह सों प्रकटि भवानी ॥
पहुँचीं जहाँ चंडिका माई । निज अनुरूप स्वरूप बनाई ॥
जेहि सुर कर स्वरूप जो वाहन । सोई वेष भूषा सोइ साधन ॥
सकल शक्ति आईं रण माहीं । द्वन्द्व विहाय कामना नाहीं ॥
ब्रह्माणी शुचि हंस विमाना । लहे कमंडलु सूत्र सोहाना ॥
वृषभ बैठि शिव शक्ति विशाला । अहि कंकण त्रिशूल शशि भाला ॥
कौमारी मयूर चढ़ि आई । कर गहि शक्ति युद्ध कहुँ भाई ॥

दोहा- शंख चक्र सारँग धनुष गदा खड्ग लै हाथ ।
विष्णु शक्ति सोहै गरुड़ युद्ध कामना साथ ।। २ ।।

यज्ञ वराह शक्ति वाराही । श्री हरि वेष साजि रण राही ॥
नार्सिंही नृसिंह वपु धारे । कंठ केश बल छिटकहिं तारे ॥
इंद्र शक्ति ऐरावत माहीं । सहस नयन कर वज्र सोहाहीं ॥
यहि विधि सकल शक्ति धरि वेषा । आईं लरन युद्ध अवशेषा ॥
परिवृत देव शक्ति सन शंकर । देखि चंडिकहिं कहे वचन वर ॥

आयी । उसकी गर्दन के बालों के झटके से आकाश के तारे बिखरे पड़ते थे । इसी प्रकार इन्द्र की शक्ति वज्र हाथ में लिये गजराज ऐरावत पर बैठकर आयी । उसके भी सहस्त्र नेत्र थे । इन्द्र का जैसा रूप है, वैसा ही उसका भी था ।

तदनन्तर उन देव-शक्तियों से घिरे हुए महादेव जी ने चण्डिका से कहा-मेरी प्रसन्नता के लिये तुम शीघ्र ही इन असुरों का संहार करो । तब देवी के शरीर से अत्यन्त भयानक और परम उग्र चण्डिका-शक्ति प्रकट हुई । जो सैकड़ों गीदड़ियों की भाँति आवाज करने वाली थी । उस अपराजिता देवी ने धूमिल जटावाले महादेव जी से कहा-भगवन् आप शुम्भ-निशुम्भ के पास दूत बनकर जाइये । और उन अत्यन्त गर्वीले दानव शुम्भ एवं निशुम्भ दोनों से कहिये । साथ ही उनके अतिरिक्त भी जो दानव युद्ध के लिये वहाँ उपस्थित हों उनको भी यह संदेश दीजिये । दैत्यों यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो पाताल को लौट जाओ । इन्द्र को त्रिलोकी का राज्य मिल जाय और देवता यज्ञ भाग का उपभोग करें । ३ । यदि बल के घमंड में आकर तुम युद्ध की अभिलाषा रखते हो तो आओ । मेरी शिवाएँ योगिनियाँ तुम्हारे कच्चे मांस से तृप्त हों । चूँकि उस देवी ने भगवान् शिव को दूत के कार्य में नियुक्त किया था, इसलिये वह शिवदूती के नाम से संसार में विख्यात हुई । वे महादैत्य भी भगवान् शिव के मुँह



तुम सब हरहु शीघ्र महिभारा। हर्ष होइ कुरु असुर सँहारा॥
तब चंड्या चंडी प्रकटानी। परम उग्र चंडिका भवानी॥
करहिं निनाद भयंकर भारी। मनहुँ शिवा शत शब्द सुधारी॥
अपराजिता सकल जग माई। धूम्र जटिल सन कहेउ बनाई॥
शुंभ निशुंभ पास बनि दूता। जाइ तिन्हहिं समुझाव बहूता॥
औरहु दैत्य घमंड सँवारे। अति अभिमानी लड़न पधारे॥

दोहा- यदि चाहहु जीवन अबहुँ लौटि जाहु पाताल।
राज इंद्र मख भाग सुर पावहिं सब खुशहाल॥ ३॥

जो घमंड कर गहन कुहासा। राखहिं दुष्ट युद्ध अभिलाषा॥
कहहु तौ शिवा तृप्त ह्वै मोरी। मांस तुम्हार चबाइ बहोरी॥
शिवहिं दूत कहि बोली बाता। शिवदूती इति जग विख्याता॥
असुरन्ह सुनेउ देवि संदेशा। क्रोधित भए सुनत उपदेशा॥
कात्यायनी आदि जहँ माता। तहँ सब दैत्य गए दुख दाता॥
देविहिं देखि ते करहिं प्रहारा। ऋष्टि शक्ति शर अस्त्र अपारा॥

से देवी के वचन सुनकर क्रोध में भर गये और जहाँ कात्यायनी विराजमान थीं, उस ओर बढ़े। तदनन्तर वे दैत्य अमर्ष में भरकर पहले ही देवी के ऊपर बाण, शक्ति और ऋष्टि आदि अस्त्रों की वृष्टि करने लगे। तब देवी ने भी खेल-खेल में ही धनुष की टंकार की और उससे छोड़े हुए बड़े-बड़े बाणों द्वारा दैत्यों के चलाये हुए बाण, शूल, शक्ति और फरसों को काट डाला, फिर काली उनके आगे होकर शत्रुओं को शूल के प्रहार से विदीर्ण करने लगी और खट्वांग से उनका कचूमर निकालती हुई रणभूमि में विचरने लगी। ब्रह्माणी भी जिस-जिस ओर दौड़ती, उसी-उसी ओर अपने कमण्डलु का जल छिड़ककर शत्रुओं के ओज और पराक्रम को नष्ट कर देती थीं। ४। माहेश्वरी ने त्रिशूल से तथा वैष्णवी ने चक्र से और अत्यन्त क्रोध में भरी हुई कुमार कार्तिकेय की शक्ति ने शक्ति से दैत्यों का संहार आरम्भ किया। इन्द्रशक्ति के वज्रप्रहार से विदीर्ण हो सैकड़ों दैत्य-दानव रक्त की धारा बहाते हुए पृथ्वी पर सो गये। वाराही शक्ति ने कितनों को अपने थूथन की मार से नष्ट किया, दाढ़ों के अग्रभाग से कितनों की छाती छेद डाली तथा कितने ही दैत्य उसके चक्र की चोट से विदीर्ण होकर गिर पड़े। नारसिंही भी दूसरे-दूसरे महादैत्यों को अपने नखों से विदीर्ण करके खाती और सिंहनाद से दिशाओं एवं आकाश को गुँजाती हुई युद्ध-क्षेत्र में विचरने लगी। कितने ही



तब देविहु करि धनुष्टँकोरा। काटे अस्त्र शस्त्र चहुँ ओरा॥
पुनि आगे बढ़ि काली आई। लै त्रिशूल खट्वांग चलाई॥
देखत बनहिं न असुर विदारे। छिन्न-भिन्न भूतल पर डारे॥
यहि विधि विचरहिं रण महुँ माता। धावहिं ब्रह्माणी विख्याता॥

दोहा- **लहे कमंडलु जल फिरैं छिड़कहिं असुर निहार।**
ओज पराक्रम नाशहिं करि-करि सलिल प्रहार।। ४।।

माहेश्वरी त्रिशूल चलावैं। माँ वैष्णवी चक्र गहि धावैं॥
कौमारी कर शक्ति सँवारे। यहि विधि माँ दैत्यन्ह संहारे॥
ऐंद्री कुलिश चलाइ विदारा। गिरे धरनि खल शोणित धारा॥
वाराही करि तुंड प्रहारा। दशन्ह दंशि रिपु वक्ष विदारा॥
चक्र चोट विदीर्ण महि डारे। यहि विधि दैत्य समूह सँहारे॥
नारहरी निज नखन्ह विदारी। भक्षै खलन्ह दिशा गुंजारी॥
करत घोर रव गूँज अकाशा। विचरति खेत निनादहिं आशा॥
अट्टहास शिवदूती कीन्हा। त्रासन्ह गिरे ग्रास करि लीन्हा॥

असुर शिवदूती के प्रचण्ड अट्टहास से अत्यन्त भयभीत हो पृथ्वी पर गिर पड़े और गिरने पर उन्हें शिवदूती ने उस समय अपना ग्रास बना लिया।

इस प्रकार क्रोध में भरे हुए मातृगणों को नाना प्रकार के उपायों से बड़े-बड़े असुरों का मर्दन करते देख दैत्य सैनिक भाग खड़े हुए। मातृगणों से पीड़ित दैत्यों को युद्ध से भागते देख रक्तबीज नामक महादैत्य क्रोध में भरकर युद्ध करने के लिये आया। ५। उसके शरीर से जब रक्त की बूँद पृथ्वी पर गिरती, तब उसी के समान शक्तिशाली एक दूसरा महादैत्य पृथ्वी पर पैदा हो जाता।

महासुर रक्तबीज हाथ में गदा लेकर इन्द्रशक्ति के साथ युद्ध करने लगा। तब ऐन्द्री ने अपने वज्र से रक्तबीज को मारा। वज्र से घायल होने पर उसके शरीर से बहुत-सा रक्त चूने लगा और उससे उसी के समान रूप तथा पराक्रम वाले योद्धा उत्पन्न होने लगे। पुनः वज्र के प्रहार से जब उसका मस्तक घायल हुआ तब रक्त बहने लगा और उससे हजारों पुरुष उत्पन्न हो गये। वैष्णवी ने युद्ध में रक्तबीज पर चक्र का प्रहार किया तथा ऐन्द्री ने दैत्य सेनापति को गदा से चोट पहुँचायी।

वैष्णवी के चक्र से घायल होने पर उसके शरीर से जो रक्त बहा और उससे जो उसी



दोहा- मातृगणन्ह मर्दन विधि विकट जानि खल भाग।
रक्तबीज करि कोप तब आयउ लरन अभाग।। ५।।

रक्त बीज कर अमित प्रभाऊ। शोणित विंदु गिरइ महि काऊ॥
तेहि सों प्रकटत दैत्य विशाला। रक्त बीज सम बल विकराला॥
गहे गदा ऐंद्री सन भिरा। कुलिश घात सों शोणित गिरा॥
शोणित बूँद भूमि जे परहीं। प्रकटत असुर शस्त्र लै भिरहीं॥
शोणित गिरा वज्र पुनि लागे। प्रकटे असुर अनंत अभागे॥
तब वैष्णवी चक्र गहि मारा। ऐंद्री कर पुनि गदा प्रहारा॥
रक्त पात सों चले पनारा। उपजत असुर व्याप्त संसारा॥
शक्ति सँवारि गहे कौमारी। वाराही कृपाण कर धारी॥
माहेश्वरी त्रिशूल उतारा। कोपेउ खल करि गदा प्रहारा॥
घायल वीर लड़त रण कैसे। झरना झरत भिरे गिरि जैसे॥
शक्ति शूल क्षत भए अपारा। जहँ तहँ बही रक्त की धारा॥
शोणित बिंदु असुर वपु धारी। भे असंख्य देवन्ह भयकारी॥
देखेउ सुरन्ह उदास विशेषी। कहैं चंडिका कालिहिं देखी॥

के बराबर आकार वाले सहस्त्रों महादैत्य प्रकट हुए, उनके द्वारा सम्पूर्ण जगत् व्याप्त हो गया। कौमारी ने शक्ति से, वाराही ने खड्ग से और माहेश्वरी ने त्रिशूल से महादैत्य रक्तबीज को घायल किया। क्रोध में भरे हुए उस महादैत्य रक्तबीज ने भी गदा से सभी मातृ-शक्तियों पर पृथक्-पृथक् प्रहार किया। शक्ति और शूल आदि से अनेक बार घायल होने पर जो उसके शरीर से रक्त की धारा पृथ्वी पर गिरी, उससे भी निश्चय ही सैकड़ों असुर उत्पन्न हुए। इस प्रकार इस महादैत्य के रक्त से प्रकट हुए असुरों द्वारा सम्पूर्ण जगत् व्याप्त हो गया। इससे उन देवताओं को बड़ा भय हुआ। देवताओं को उदास देख चण्डिका ने काली से शीघ्रतापूर्वक कहा-चामुण्डे तुम अपना मुख और भी फैलाओ।

तथा मेरे शस्त्रपात से गिरने वाले रक्तबिन्दुओं और उनसे उत्पन्न होने वाले महादैत्यों को तुम अपने इस उतावले मुख से खा जाओ। ६। इस प्रकार रक्त से उत्पन्न होने वाले महादैत्यों का भक्षण करती हुई तुम रण में विचरती रहो। ऐसा करने से उस दैत्य का सारा रक्त क्षीण हो जाने पर वह स्वयं भी नष्ट हो जायगा। उन भयंकर दैत्यों को जब तुम खा जाओगी, तब दूसरे नये दैत्य उत्पन्न नहीं हो सकेंगे। काली से यों कहकर चण्डिका देवी ने शूल से रक्तबीज को मारा और काली ने अपने मुख में उसका रक्त ले लिया। तब उसने वहाँ



दोहा- देवी तुम आपन मुख करहु शीघ्र विस्तार।
शस्त्रघात को शोणित पियउ सो बारंबार।। ६।।

रक्तज दैत्यन्ह भक्षि भवानी। असुर अनेक वधहु अभिमानी॥
क्षीण रक्त होइहि शर लागे। पुनः न उपजहिं असुर अभागे॥
अस कहि कीन्ह शूल सन घाता। शोणित पिअहिं कालिका माता॥
भागा असुर बहुत खिसियाना। सोचेउ मन जनु जाहिं पराना॥
रक्त बीज करि हाहाकारा। माँ चंडी पर गदा प्रहारा॥
खल प्रहार तहँ लागत कैसे। वारिष बूँद मेरु गिरि जैसे॥
चामुंडा करि शोणित पाना। रक्त बीज कर हरहिं पराना॥
रक्तज असुर उगे मुख माहीं। शोणित सहित कालिका खाहीं॥

दोहा- रक्तहीन लखि असुर कहुँ कीन्हि शस्त्र बौछार।
वध्यौ असुर सुर हर्षित नाचहिं गण हुंकार।। ७।।

आठवाँ अध्याय संपूर्ण



चण्डिका पर गदा से प्रहार किया। रक्तबीज के घायल शरीर से बहुत-सा रक्त गिरा। किंतु ज्यों ही वह गिरा त्यों ही चामुण्डा ने उसे अपने मुख में ले लिया। रक्त गिरने से काली के मुख में जो महादैत्य उत्पन्न हुए, उन्हें भी वह चट कर गयी और उसने रक्तबीज का रक्त भी पी लिया। तदनन्तर देवी ने रक्तबीज को, जिसका रक्त चामुण्डा ने पी लिया था, वज्र, बाण, खड्ग तथा ऋष्टि आदि से मार डाला। राजन् इस प्रकार शस्त्रों के समुदाय से आहत एवं रक्तहीन हुआ महादैत्य रक्तबीज पृथ्वी पर गिर पड़ा। नरेश्वर इससे देवताओं को अनुपम हर्ष की प्राप्ति हुई। और मातृगण उन असुरों के रक्तपान के मद से उद्धत-सा होकर नृत्य करने लगा।७।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में रक्तबीज-वध नामक आठवाँ अध्याय पूरा हुआ।





नौवाँ अध्याय

दोहा- कह नृप रक्त बीज वध कीन्ह सो वृत्त महान।
देवि चरित पावन परम मुनिवर कहेउ बखान॥

मो पै कृपा करन जौ चहहू। शुंभ निशुंभ कीन्ह सो कहहू॥
रक्त बीज वध की सुधि पाई। असुरन्ह कीन्ह काह ऋषिराई॥
सुनि मुनि बोले वचन विचारी। जेहि प्रकार कोपे असुरारी॥
रक्त बीज वा औरहु वीरा। सेना साथ वधे रणधीरा॥
भरेउ अमर्ष सैन्य लै धावा। तब निशुंभ योधन्ह सँग आवा॥
ओठ चबात क्रोध महुँ अहहीं। जगदंबा कहँ मारन चहहीं॥
शुंभ महाभट सैन्य सजाई। आवा करन युद्ध खिसियाई॥
मातृ गणन्ह सँग करब लराई। चंडिहिं वधब चलेउ चित लाई॥

दोहा- शुंभ निशुँभ जगदंब सन कीन्ह घोर संग्राम।
आयु क्षीण नहिं और कछु अबहुँ रहेहु विधि वाम।। १।।

राजा ने कहा-भगवन् आपने रक्तबीज के बध से सम्बन्ध रखने वाला देवी-चरित्र का यह अद्भुत माहात्म्य मुझे बतलाया। अब रक्तबीज के मारे जाने पर अत्यन्त क्रोध में भरे हुए शुम्भ और निशुम्भ ने जो कर्म किया, उसे मैं सुनाना चाहता हूँ।

ऋषि कहते हैं-राजन युद्ध में रक्तबीज तथा अन्य दैत्यों के मारे जाने पर शुम्भ और निशुम्भ के क्रोध की सीमा न रही। अपनी विशाल सेना इस प्रकार मारी जाती देख निशुम्भ अमर्ष में भरकर देवी की ओर दौड़ा। उसके साथ असुरों की प्रधान सेना थी। उसके आगे, पीछे तथा पार्श्वभाग में बड़े-बड़े असुर थे, जो क्रोध से ओठ चबाते हुए देवी को मार डालने के लिये आये। महापराक्रमी शुम्भ भी अपनी सेना के साथ मातृगणों से युद्ध करके क्रोधवश चण्डिका को मारने के लिये आ पहुँचा। तब देवी के साथ शुम्भ और निशुम्भ का घोर संग्राम छिड़ गया। १। वे दोनों दैत्य मेघों की भाँति बाणों की भयंकर वृष्टि कर रहे थे। उन दोनों के चलाये हुए बाणों को चण्डिका ने अपने बाणों के समूह से तुरंत काट डाला और शस्त्र समूहों की वर्षा करके उन दोनों दैत्यपतियों के अंगों में भी चोट पहुँचायी। निशुम्भ ने तीखी तलवार और चमकती हुई ढाल लेकर देवी के श्रेष्ठ वाहन सिंह के मस्तक पर प्रहार किया। अपने वाहन को चोट पहुँचाने पर देवी ने क्षुरप्र नामक बाण से निशुम्भ की श्रेष्ठ तलवार तुरंत



वरषहिं शर सक्रोध दोउ भाई। मानहुँ मेघ डटे झरि लाई॥
विशिख समूह छिंदि छन माहीं। शस्त्र अनेक धारि समुहाहीं॥
घायल कीन्ह दैत्य अभिमानी। असुर दलहिं दलमलहिं भवानी॥
ढाल कृपाण निशुंभ सुधारा। सिंह भाल महँ कीन्ह प्रहारा॥
अस आचरत असुर कहँ देखा। शर क्षुरप्र संधानि विशेषा॥
काटि कृपाण त्वरित महि डारी। छिंदि ढाल वसु शशि भुवि झारी॥
भंजे चर्म कृपाण भवानी। पुनि हनि शक्ति असुर अभिमानी॥
चक्र चलाइ शक्ति हनि फेंकत। जरा निशुंभ भवानिहिं देखत॥
तब सक्रोध फेंका गहि शूला। देविहिं वधब जानि मनमूला॥

दोहा- मुष्टि पात सन चूर्ण लखि असुर गदा गहि हाथ।
चक्रित करि फेंकी कटी जरी शूल सों साथ॥ २॥

परशु निशुंभ गहे कर धावत। देवी दीख अपन दिशि आवत॥
संधाने तब विशिख भवानी। घायल गिरा असुर अभिमानी॥
वध्यौ निशुंभहिं शुंभ विलोका। कोपेउ असुर खाइ जनु लोका॥

ही काट डाली और उसकी ढाल को भी, जिसमें आठ चाँद जड़े थे, खण्ड-खण्ड कर दिया। ढाल और तलवार के कट जाने पर उस असुर ने शक्ति चलायी, किंतु सामने आने पर देवी ने चक्र से उसके भी दो टुकड़े कर दिये। अब तो निशुम्भ क्रोध से जल उठा और उस दानव ने देवी को मारने के लिये शूल उठाया किंतु देवी ने समीप आने पर उसे भी मुक्के से मारकर चूर्ण कर दिया। तब उसने गदा घुमाकर चण्डी के ऊपर चलायी, परंतु वह भी देवी के त्रिशूल से कटकर भस्म हो गयी। २। तदनन्तर दैत्यराज निशुम्भ को फरसा हाथ में लेकर आते देख देवी ने बाण समूहों से घायलकर धरती पर सुला दिया। उस भयंकर पराक्रमी भाई निशुम्भ के धराशायी हो जाने पर शुम्भ को बड़ा क्रोध हुआ और अम्बिका का वध करने के लिये वह आगे बढ़ा। रथ पर बैठे-बैठे ही उत्तम आयुधों से सुशोभित अपनी बड़ी-बडी आठ अनुपम भुजाओं से समूचे आकाश को ढककर वह अद्भुत शोभा पाने लगा। उसे आते देख देवी ने शंख बजाया और धनुष की प्रत्यंचा का भी अत्यन्त दुस्सह शब्द किया। साथ ही अपने घण्टे के शब्द से, जो समस्त दैत्य-सैनिकों का तेज नष्ट करने वाला था, सम्पूर्ण दिशाओं को व्याप्त कर दिया। तदनन्तर सिंह ने भी अपनी दहाड़ से, जिसे सुनकर बड़े-बड़े गजराजों का महान् मद चूर हो जाता था, आकाश, पृथ्वी और दसों दिशाओं को गुँजा दिया।



वधब अंबिकहिं अस मन धारी। आगे बढ़ेउ वीर असुरारी॥
रथारूढ़ आयुधन्ह सुशोभित । वसु भुज व्योम व्याप्त अति अद्भुत॥
देवी असुरहिं आवत देखा। ज्या रव करि पुनि शंख विशेषा॥
घंटा स्वन खल तेज नशावन। असुर शोक सुर सुख उपजावन॥
गूँजहि सकल दिशन्ह महुँ जाई। गर्जति सिंह गजन्ह भय दाई॥
वसुधा व्योम दिशा दश झारी। गूँजहि सिंह गर्जना भारी॥
औरहु अधिक शब्द भयकारे। काली उछलि हाथ महि मारे॥

दोहा- **भयउ घोर रव समर महुँ चहुँ दिशि हाहाकार।**
प्रतिध्वनि होत भयावनी काँपि उठा संसार।। ३।।

अट्टहास शिव दूती कीन्हा। असुरन्ह हेतु अमंगल चीन्हा॥
क्रोधित भयउ शुंभ अभिमानी। बोलीं ताहि पुकारि भवानी॥
ठहर दुरात्मन गर्जन घोरा। बोले सुर जय जय चहुँ ओरा॥
दागेसि शुंभ शक्ति विकराला। मनहुँ अनल गिरि धधकहिं ज्वाला॥
देवी लै लुकाठ सो टारी। अस बिलोकि खल गर्जेउ भारी॥

फिर काली ने आकाश में उछलकर अपने दोनों हाथों से पृथ्वी पर आघात किया। उससे ऐसा भयंकर शब्द हुआ, जिससे पहले के सभी शब्द शान्त हो गये।३। तत्पश्चात् शिवदूती ने दैत्यों के लिये अमंगल जनक अट्टहास किया, इन शब्दों को सुनकर समस्त असुर थर्रा उठे, किंतु शुम्भ को बड़ा क्रोध हुआ। उस समय देवी ने जब शुम्भ को लक्ष्य करके कहा-ओ दुरात्मन् खड़ा रह, खड़ा रह, तभी आकाश में खड़े हुए देवता बोल उठे-जय हो, जय हो। शुम्भ ने वहाँ आकर ज्वालाओं से युक्त अत्यन्त भयानक शक्ति चलायी। अग्निमय पर्वत के समान आती हुई उस शक्ति को देवी ने बड़े भारी लूके से दूर हटा दिया। उस समय शुम्भ के सिंहनाद से तीनों लोक गूँज उठे। राजन् उसकी प्रतिध्वनि से वज्रपात के समान भयानक शब्द हुआ, जिसने अन्य सब शब्दों को जीत लिया। शुम्भ के चलाये हुए बाणों के देवी ने और देवी के चलाये हुए बाणों को शुम्भ ने अपने भयंकर बाणों द्वारा सैकड़ों और हजारों टुकड़े कर दिये। तब क्रोध में भरी हुई चण्डिका ने शुम्भ को शूल से मारा। उसके आघात से मूर्च्छित हो वह पृथ्वी पर गिर पड़ा।

इतने में ही निशुम्भ को चेतना हुई और उसने धनुष हाथ में लेकर बाणों द्वारा देवी, काली तथा सिंह को घायल कर डाला।४। पुनः उस दैत्यराज ने दस हजार बाँहें बनाकर



वज्र पात रव सम जग झारी। भयउ भयंकर शब्द पचारी॥
शुंभासुर के विशिख विशाला। काटहि माँ चंडिका कराला॥
जे जस शर डारहिं जगदंबा। शुंभासुर काटहि अविलंबा॥
तब चंडिका शूल गहि मारा। मूर्च्छित गिरा शुंभ बरियारा॥
दोहा- तब निशुंभ पुनि चेतेउ धनुष वाण गहि हाथ।
घायल कीन्हेसि कालिकहिं सिंह सुवाहन साथ।। ४।।
असुर अयुत निज भुजा बनाए। आच्छादन कहुँ चक्र चलाए॥
कीन्ह निशुंभ चक्र आच्छादित। अस विलोकि दुर्गा अति क्रोधित॥
छाँड़ि विशिख रिपु चक्र नशाए। शरन्ह खंडि सब भूमि गिराए॥
गहि कर गदा असुर तब धावा। चंडिहिं वधब विचार बनावा॥
असुरारिहिं देखेउ जगदंबा। गहि असि छिंदि गदा अविलंबा॥
तब निशुंभ कर शूल उठाई। सुर पीड़क धावा खिसियाई॥
आवत असुर देखि जगदंबा। मारा शूल न कीन्ह बिलंबा॥
वार अमोघ छुवत क्षत घोरा। तेहि सन प्रकट्यौ दैत्य कठोरा॥
तिष्ठ तिष्ठ कह असुर पुकारा। तब हँसि देवि खड्ग हनि मारा॥

चक्रों के प्रहार से चण्डिका को आच्छादित कर दिया तब दुर्गम पीड़ा का नाश करने वाली भगवती दुर्गा ने कुपित होकर अपने बाणों से उन चक्रों तथा बाणों को काट गिराया। यह देख निशुंभ दैत्य सेना के साथ चण्डिका का वध करने के लिये हाथ में गदा ले बड़े वेग से दौड़ा। उसके आते ही चण्डी ने तीखी धार वाली तलवार से उसकी गदा को शीघ्र ही काट डाला। तब उसने शूल हाथ में ले लिया। देवताओं को पीड़ा देने वाले निशुम्भ को शूल लिये आते देख चण्डिका ने वेग से चलाये हुए अपने शूल से उसकी छाती छेद डाली। शूल से विदीर्ण हो जाने पर उसकी छाती से एक दूसरा महाबली एवं महापराक्रमी पुरुष खड़ी रह, खड़ी रह कहता हुआ निकला। उस निकलते हुए पुरुष की बात सुनकर देवी ठठाकर हँस पड़ीं और खड्ग से उन्होंने उसका मस्तक काट डाला। ५। फिर तो वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। तदनन्तर सिंह अपनी दाढ़ों से असुरों की गर्दन कुचलकर खाने लगा, यह बड़ा भयंकर दृश्य था। उधर काली तथा शिवदूती ने भी अन्यान्य दैत्यों का भक्षण आरम्भ किया। कौमारी की शक्ति से विदीर्ण होकर कितने ही महादैत्य नष्ट हो गये। ब्रह्माणी के मन्त्रपूत जल से निस्तेज होकर कितने ही भाग खड़े हुए। कितने ही दैत्य माहेश्वरी के त्रिशूल से छिन्न-भिन्न हो धराशायी हो गये। वाराही के थूथुन के आघात से कितनों का पृथ्वी पर कचूमर निकल गया।



दोहा- बहु विधि खल खेलत रह्यौ तब लगि लागि कृपान।
निरखि निरखि जगदंब छवि चाहत चलन परान।। ५ ।।

काटत भाल गिरा खल धरनी। सुनहु भूप केहरि की करनी॥
दाढ़न्ह दाबि असुर शिर भारी। कुचले कंठ दृश्य भयकारी॥
उत काली शिवदूती अंबा। दैत्यन्ह भक्षण कीन्ह अरंभा॥
कौमारी के शक्ति प्रहारे। कितने महादैत्य रण डारे॥
मंत्रित जल डारैं ब्रह्मानी। भागे तेज हीन खल प्रानी॥
माहेश्वरी त्रिशूल चलाए। छिन्न भिन्न खल धरा बिछाए॥
वाराही निज तुंड हुराई। वधै वैष्णवी चक्र चलाई॥
अस करि विपुल असुर संहारे। मातु ऐंद्री वज्र प्रहारे॥

दोहा- यहि विधि वधे असंख्य खल कछु भागे भरि त्रास।
कछु शिवदूती कालिका वा केहरि मुख ग्रास।। ६ ।।

नौवाँ अध्याय संपूर्ण



वैष्णवी ने भी अपने चक्र से दानवों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। ऐन्द्री के हाथ से छूटे हुए वज्र से भी कितने ही प्राणों से हाथ धो बैठे। कुछ असुर नष्ट हो गये, कुछ उस महायुद्ध से भाग गये तथा कितने ही काली, शिवदूती तथा सिंह के ग्रास बन गये। ६।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में निशुम्भ-वध नामक नौवाँ अध्याय पूरा हुआ।





दसवाँ अध्याय

दोहा- बोले ऋषि भूपति सुनहु कठिन रणांगण जान।
प्रान समान भ्रातृ वध देखि शुंभ खिसियान।।

बोला शठ सक्रोध अकुलाना। दुर्गे दुष्ट तोहि अभिमाना॥
लरसि न किन अपने बल भामिनि। औरन्ह बल आश्रित अभिमानिनि॥
कहैं मातु मैं सतत अकेली। मम विभूतियाँ सखा सहेली॥
हमैं छाँड़ि कोउ दूसर नाहीं। देखु दुष्ट प्रविशहिं मोहि माहीं॥
सब विभूतियाँ सँग ब्रह्मानी। विलय लीन्ह अंबिका भवानी॥
खड़ी अकेलि कहैं जगदंबा। निज ऐश्वर्य शक्ति अवलंबा॥
धरे स्वरूप अनेक बनाई। अब अकेल ह्वै खड़ी दृढ़ाई॥
सुस्थिर तुहूँ होब धिक्कारी। देखहु रण भावना हमारी॥
बोले ऋषि पुनि गिरा उचारी। एतना कहत छिड़ा रण भारी॥
वरषहिं अस्त्र शस्त्र दुहुँ ओरा। देवासुर देखहिं रन घोरा॥

ऋषि कहते हैं-राजन् अपने प्राणों के समान प्यारे भाई निशुम्भ को मारा गया देख तथा सारी सेना का संहार होता जान शुम्भ ने कुपित होकर कहा-दुष्ट दुर्गे तू बल के अभिमान में आकर झूठ-मूठका घमंड न दिखा। तू बड़ी मानिनी बनी हुई है, किंतु दूसरी स्त्रियों के बल का सहारा लेकर लड़ती है।

देवी बोलीं-ओ दुष्ट मैं अकेली ही हूँ। इस संसार में मेरे सिवा दूसरी कौन है। देख, ये मेरी ही विभूतियाँ हैं, अतः मुझमें ही प्रवेश कर रही हैं।

तदनन्तर ब्रह्माणी आदि समस्त देवियाँ अम्बिका देवी के शरीर में लीन हो गयीं। उस समय केवल अम्बिका देवी ही रह गयीं।

देवी बोलीं-मैं अपनी ऐश्वर्यशक्ति से अनेक रूपों में यहाँ उपस्थित हुई थी। उन सब रूपों को मैंने समेट लिया। अब अकेली ही युद्ध में खड़ी हूँ। तुम भी स्थिर हो जाओ।

ऋषि कहते हैं-तदनन्तर देवी और शुम्भ दोनों में सब देवताओं तथा दानवों के देखते-देखते भयंकर युद्ध छिड़ गया। बाणों की वर्षा तथा तीखे शस्त्रों एवं दारुण प्रहार के कारण उन दोनों का युद्ध सब लोगों के लिये बड़ा भयानक प्रतीत हुआ। उस समय अम्बिका देवी ने जो सैकड़ों दिव्य अस्त्र छोड़े, उन्हें दैत्यराज शुम्भ ने उनके निवारक अस्त्रों द्वारा काट



लरहिं अंबिका कठिन लराई। छाड़हिं दिव्य अस्त्र समुदाई॥
शुंभ कीन्ह सो सकल निवारण। समुझहिं जदपि भगवती कारण॥
छाँड़ेसि दिव्य अस्त्र असुरारी। नष्ट कीन्ह भगवती हुँकारी॥
डारेसि अमित शरन्ह खल क्रोधित। भईं भगवती शर आच्छादित॥

दोहा- काटेउ धनु तेहि असुर कर अति सक्रोध जगदंब।
बरषि विशिख वर बार बहु तमकि उठीं अविलंब।।१।।

काटत धनुष शक्ति लै धावा। दीख भगवती करहिं बनावा॥
चक्र चलाइ शक्ति करि खंडित। पुनि खल गहिअसि शत शशि मंडित॥
गहि असि शठ धावा अति आतुर। धनु धरि कर महुँ डारि निशित शर॥
जग जननी असि चर्म विदारी। रवि कर सम अति उज्ज्वल धारी॥
हय सारथी असुर वर केरे। वधे लरत रन तेउ घनेरे॥
मूर्ख शिष्य उपदेशहिं जेऊ। तिय कुनारि घर पोषहिं तेऊ॥
दुख व्याकुल सनेह खल प्रीती। साधुहु दुख पावत अस नीती॥
शुंभ संग जे लरन पधारे। वधे तेपि अवनीतल डारे॥

डाला। इसी प्रकार शुम्भ ने भी जो दिव्य अस्त्र चलाये, उन्हें परमेश्वरी ने भयंकर हुंकार शब्द के उच्चारण आदि द्वारा खिलवाड़ में ही नष्ट कर डाला तब उस असुर ने सैकड़ों बाणों से देवी को आच्छादित कर दिया। ये देख क्रोध में भरी हुई उन देवी ने भी बाण मारकर उसका धनुष काट डाला। १। धनुष कट जाने पर फिर दैत्यराज ने शक्ति हाथ में ली, किंतु देवी ने चक्रसे उसके हाथ की शक्ति को भी काट गिराया। तत्पश्चात् दैत्यों के स्वामी शुम्भ ने सौ चाँदवाली चमकती हुई ढाल और तलवार हाथ में ले उस समय देवी पर धावा किया। उसके आते ही चण्डिका ने अपने धनुष से छोड़े हुए तीखे बाणों द्वारा उसकी सूर्य की किरणों के समान उज्ज्वल ढाल और तलवार को तुरंत काट दिया फिर उस दैत्य के घोड़े और सारथि मारे गये, धनुष तो पहले ही कट चुका था, अब उसने अम्बिका को मारने के लिये उद्यत हो भयंकर मुद्‌गर हाथ में लिया। उसे आते देख देवी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से उसका मुद्‌गर भी काट डाला, तिस पर भी वह असुर मुक्का तानकर बड़े वेग से देवी की ओर झपटा। उस दैत्यराज ने देवी की छाती में मुक्का मारा, तब उन देवी ने भी उसकी छाती में एक चाँटा जड़ दिया। देवी की थप्पड़ खाकर दैत्यराज शुम्भ पृथ्वी पर गिर पड़ा, किंतु पुनः सहसा पूर्ववत् उठकर खड़ा हो गया, फिर वह उछला और देवी को ऊपर ले जाकर आकाश में खड़ा हो गया, तब



अब खल धनु सारथि हय हीना। गहे घोर मुद्गर अति पीना॥
वधब अंबिकहिं मनहिं विचारी। अति बलवान भयानक भारी॥
आवत असुर देखि जगदंबा। डारे शर अनेक अविलंबा॥
भंजा मुद्गर पुहुमि बिछावा। खल खिसियान मुष्टि करि धावा॥
मुष्टि प्रहार हृदय महुँ कीन्हा। सो सहि देविहु तल हनि दीन्हा॥
तल प्रहार लागत भुवि गिरा। पुनि उठि ठाढ़ भयउ खल भिरा॥

दोहा- **देविहिं लै गयो ऊपर द्वन्द्व छिड़ा आकाश।**
सिद्ध मुनिन्ह मन विस्मय प्रथम देखि मन त्रास॥ २॥

पुनि चंडिका कीन्ह रण भारी। पटक्यौ खलहिं भूमि ललकारी॥
भूमि परत धावा शठ ऐसे। चंडिहिं वधब मनहुँ मन जैसे॥
देखा रिपु आवत निज ओरा। वेधेउ वक्ष त्रिशूल कठोरा॥
सहि न सकेउ वेदना गँभीरा। पर्‌यौ पुहिम पावत पवि पीरा॥
चले प्रान पावन ह्वै कैसे। डूबत पोत तजहिं जन जैसे॥
काँपत सिंधु द्वीप गिरि धरनी। पर्‌यौ भूमि खल सोचत करनी॥

चण्डिका आकाश में भी बिना किसी आधार के ही शुम्भ के साथ युद्ध करने लगीं। उस समय दैत्य और चण्डिका आकाश में एक दूसरे से लड़ने लगे। उनका वह युद्ध पहले सिद्ध और मुनियों को विस्मय में डालने वाला हुआ। २। फिर अम्बिका ने शुम्भ के साथ बहुत देर तक युद्ध करने के पश्चात् उसको उठाकर घुमाया और पृथ्वी पर पटक दिया। पटके जाने पर पृथ्वी पर आने के बाद वह दुष्टात्मा दैत्य पुनः चण्डिका का वध करने के लिये उनकी ओर बड़े वेग से दौड़ा। तब समस्त दैत्यों के राजा शुम्भ को अपनी ओर आते देख देवी ने त्रिशूल से उसकी छाती छेदकर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। देवी के शूल की धार से घायल होने पर उसके प्राण-पखेरू उड़ गये और वह समुद्रों, द्वीपों तथा पर्वतों सहित समूची पृथ्वी को कँपाता हुआ भूमि पर गिर पड़ा। तदनन्तर उस दुरात्मा के मारे जाने पर सम्पूर्ण जगत् प्रसन्न एवं पूर्ण स्वस्थ हो गया तथा आकाश स्वच्छ दिखायी देने लगा। पहले जो उत्पात सूचक मेघ और उल्कापात होते थे, वे सब शान्त हो गये तथा उस दैत्य के मारे जाने पर नदियाँ भी ठीक मार्ग से बहने लगीं।

उस समय शुम्भ की मृत्यु के बाद सम्पूर्ण देवताओं का हृदय हर्ष से भर गया और गन्धर्व गण मधुर गीत गाने लगे। दूसरे गन्धर्व बाजे बजाने लगे और अप्सराएँ नाचने लगीं।



शुंभहिं वधे सकल संसारा। भयउ प्रसन्न स्वच्छ नभ तारा॥
स्वस्थ भयउ जग गत उत्पाता। भयद मेघ नहिं उल्कापाता॥
सकल शांत सरि निज मग बहहीं। सो सुनि सुर प्रमुदित मन रहहीं॥
गावहिं गीत बजावहिं बाजा। हरषित सब गंधर्व समाजा॥

दोहा- नाचहिं गावहिं अप्सरा अनल अनिल सुख सार।
प्रभा प्रखर सब शांत दिग् करहिं मंगलाचार।। ३।।

दसवाँ अध्याय संपूर्ण





पवित्र वायु बहने लगी। सूर्य की प्रभा उत्तम हो गयी। अग्निशाला की बुझी हुई आग अपने-आप प्रज्वलित हो उठी तथा सम्पूर्ण दिशाओं के भयंकर शब्द शान्त हो गये। ३।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेय पुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में शुम्भ-वध नामक दसवाँ अध्याय पूरा हुआ।







ग्यारहवाँ अध्याय

दोहा- ऋषिरुवाच सुनि शुंभ वध अग्नि अमर सुरनाथ।
सफल मनोरथ हर्षित दमकत बहुविधि माथ।।

यहिविधि चहुँदिशि प्रकट प्रकाशा। जग मगाहिं सब सुंदर आशा।।
कात्यायनी सकल जग माता। स्तुति करत देव विख्याता।।
बोले सुर शरणागत जानी। मम दुख हरहु प्रसन्न भवानी।।
विश्वेश्वरी चराचर स्वामिनि। करहु जगत हित अंतर्यामिनि।।
जगदाधार धरित्री माता। अमित पराक्रम वारि विधाता।।
बल अनंत वैष्णवी सहाया। कारण भूत सकल जग माया।।
मोहित कीन्ह विश्व समुदाई। मोक्ष विधायिनि जग सुखदाई।।
तव स्वरूप महँ विद्या सारी। सब नारिन्ह महुँ मूर्ति तुम्हारी।।
केहि विधि स्तुति करहुँ बनाई। जगद् व्याप्त तुम सन सब माई।।
स्तुति जोग द्रव्य जग जेऊ। परा वाणि जानहिं के भेऊ।।
सर्व स्वरूप स्वर्ग गति दाता। स्तुति हेतु शब्द शुभ माता।।

ऋषि कहते हैं-देवी के द्वारा वहाँ महादैत्यपति शुम्भ के मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता अग्नि को आगे करके उन कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। उस समय अभीष्ट की प्राप्ति होने पर उनके मुखकमल दमक उठे थे और उनके प्रकाश से दिशाएँ भी जगमगा उठीं थीं। देवता बोले-शरणागत की पीड़ा दूर करने वाली देवि हम पर प्रसन्न होओ। सम्पूर्ण जगत् की माता प्रसन्न होओ। विश्वेश्वरि विश्व की रक्षा करो देवि तुम्हीं चराचर जगत की अधीश्वरी हो। तुम इस जगत का एकमात्र आधार हो, क्योंकि पृथ्वी रूप में तुम्हारी ही स्थिति है। देवि तुम्हारा पराक्रम अलंघनीय है। तुम्हीं जल रूप में स्थित होकर सम्पूर्ण जगत को तृप्त करती हो। तुम अनन्त बल सम्पन्न वैष्णवी शक्ति हो। इस विश्व की कारणभूता परा माया हो। देवि तुमने इस समस्त जगत को मोहित कर रखा है। तुम्हीं प्रसन्न होने पर इस पृथ्वी पर मोक्ष की प्राप्ति कराती हो। देवि सम्पूर्ण विद्याएँ तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं। जगत में जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब तुम्हारी ही मूर्तियाँ हैं। जगदम्ब एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है? तुम तो स्तवन करने योग्य पदार्थों से परे एवं परा वाणी हो। जब तुम सर्वस्वरूपादेवी स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हो, तब इसी रूप में तुम्हारी स्तुति हो गयी। तुम्हारी स्तुति के लिये इससे अच्छी उक्तियाँ और क्या हो सकती हैं?



दोहा- बुद्धि रूप महुँ उर बसहु स्वर्ग मुक्ति प्रद मात।
नारायणी प्रणाम मम स्वीकारहु हरषात।। १।।

कला तथा काष्ठा क्रम लाई। तुम परिणाम प्रदायिनि माई॥
उपसंहार समर्थ बखानी। प्रणवउँ नारायणी भवानी॥
सकल सुमंगल दायिनि देवी। कल्याणदे शिवे सुर सेवी॥
शरणागत वत्सले त्रिनयने। पुरुषारथ सिद्धिद गिरि कन्ये॥
सृष्टि स्थिति संहार सनातनि। शक्ति रूप देवी रिपु घातिनि॥
गुणाधार सब गुण मय माता। प्रणवउँ नारायणी विधाता॥
दीन दुःखी शरणागत भक्तन्ह। पीड़ा हरहु चरण अनुरक्तन्ह॥
ब्रह्माणी बसि हंस विमाना। कुश मिश्रित जल छिड़कहु नाना॥
माहेश्वरि त्रिशूल शशि अहि धरि। वृषभारूढ़े कोटि नमन करि॥
कुक्कुट मोरन्ह वृत कौमारी। महाशक्ति धारिणि पापारी॥
शंख चक्र गदा साँरग धारिणि। माँ वैष्णवी देवि नारायणि॥

बुद्धि रूप से सब लोगों के हृदय में विराजमान रहने वाली तथा स्वर्ग एवं मोक्ष प्रदान करने वाली नारायणी देवि तुम्हें नमस्कार है। १। कला, काष्ठा आदि के रूप से क्रमशः परिणाम अवस्था-परिवर्तन की ओर ले जाने वाली तथा विश्व का उपसंहार करने में समर्थ नारायणी तुम्हें नमस्कार है। नारायणी तुम सब प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली मंगलमयी हो। कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रों वाली एवं गौरी हो। तुम्हें नमस्कार है। तुम सृष्टि, पालन और संहार की शक्तिभूता, सनातनी देवी, गुणों का आधार तथा सर्वगुणमयी हो। नारायणी तुम्हें नमस्कार है। शरण में आये हुए दीनों एवं पीड़ितों की रक्षा में संलग्न रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवी तुम्हें नमस्कार है। नारायणि तुम ब्रह्माणी का रूप धारण करके हंसों से जुते हुए विमान पर बैठती तथा कुश-मिश्रित जल छिड़कती रहती हो। तुम्हें नमस्कार है। माहेश्वरी रूप से त्रिशूल, चन्द्रमा एवं सर्प को धारण करने वाली तथा महान् वृषभ की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवी तुम्हें नमस्कार है। मोरों और मुर्गों से घिरी रहने वाली तथा महाशक्ति धारण करने वाली कौमारी रूप धारिणी निष्पापे नारायणि तुम्हें नमस्कार है। शंख, चक्र, गदा और शार्ङ्गधनुष रूप उत्तम आयुधों को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणि तुम प्रसन्न



दोहा- हाथ भयानक चक्र तव दाढ़न्ह धरणी भार।
वाराही नारायणी प्रणवउँ बारम्बार।। २।।

देवि नृसिंह उग्र वपु धारिणि। प्रणवउँ माँ त्रिभुवन भय हारिणि॥
भाल किरीट वज्र करधारे। सहस नयन उद्दीप्त सुधारे॥
वृत्रासुर प्राणन्ह अपहर्त्री। प्रणवउँ इंद्रशक्ति सुखकर्त्री॥
शिवदूतीति घोर रव कारिणि। भयद रूप रिपु सैन्य विदारिणि॥
दाढ़ विशाल वदन विकराला। मुंड मर्दिनी गल मुँड माला॥
शिव दूती चामुंडा देवी। प्रणवउँ माँ पुनि-पुनि सुरसेवी॥
श्रद्धा पुष्टि स्वधा ध्रुवा या। महारात्रि लक्ष्मी लज्जा या॥
विद्या महा अविद्या रूपा। नारायणि प्रणवउँ सुर भूपा॥

दोहा- सरस्वती मेधा वरा भूति वाभ्रवी नाम।
ईशा नियता तामसी नारायणी प्रणाम।। ३।।

माँ सर्वेश्वरि सर्व स्वरूपा। सर्व शक्ति भय भंजिनि रूपा॥
त्रय लोचन भूषित मुख मंडल। कात्यायनी करहु सब मंगल॥

होओ। तुम्हें नमस्कार है। हाथ में भयानक महाचक्र लिये और दाढ़ों पर धरती को उठाये वाराही रूप धारिणी कल्याणमयी नारायणि तुम्हें नमस्कार है। २। भयंकर नृसिंह रूप से दैत्यों के वध के लिये उद्योग करने वाली तथा त्रिभुवन की रक्षा में संलग्न रहने वाली नारायणि तुम्हें नमस्कार है। मस्तक पर किरीट और हाथ में वज्र धारण करने वाली, सहस्त्र नेत्रों के कारण उद्दीप्त दिखायी देने वाली और वृत्रासुर के प्राणों का अपहरण करने वाली इन्द्रशक्ति रूपा नारायणि देवी तुम्हें नमस्कार है। शिवदूती रूप से दैत्यों की महती सेना का संहार करने वाली, भयंकर रूप धारण तथा विकट गर्जना करने वाली नारायणि तुम्हें नमस्कार है। दाढ़ों के कारण विकराल मुख वाली मुण्डमाला से विभूतिष मुण्डमर्दिनी चामुण्डा रूपा नारायणि तुम्हें नमस्कार है। लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि तथा महाअविद्या रूपा नारायणि तुम्हें नमस्कार है। मेधा, सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा), भूति ऐश्वर्यरूपा, बाभ्रवी भूरे रंग की अथवा पार्वती, तामसी, महाकाली, नियता संयमपरायणा तथा ईशा सबकी अधीश्वरी रूपिणी नारायणि तुम्हें नमस्कार है। ३। सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे देवि सब भयों से रक्षा करो, तुम्हें नमस्कार है। कात्यायनी यह तीन लोचनों से विभूषित तुम्हारा सौम्य मुख सब प्रकार के भयों से हमारी रक्षा करे। तुम्हें



माँ दुर्गा कात्यायनि माता। वंदउँ पुनि-पुनि पद जल जाता॥
भद्रकालि विनवउँ पुनि माई। असुरांतक त्रिशूल सुखदाई॥
जेहि ते उठैं ज्वाल विकराला। सोइ भय भंजन करहि कृपाला॥
जगद व्याप्त सुनि धुनि जेहि केरी। असुर तेज हारक हिय हेरी॥
घंटा तव मम पाप नशावै। जेहि विधि मातु सुतन्ह शुभ ध्यावै॥
प्रणवउँ माँ चंडिके बहोरी। असुर वसा शोणित असि बोरी॥
सो मम मंगल करइ भवानी। करहु प्रसन्न होत रुज हानी॥
रुष्ट होत सब काम नसाहीं। शरणागतहिं आपदा नाहीं॥

दोहा- **जे बिसारि जगदंब पद चहुँ दिसि भोगहिं भोग।**
होत दुसह दुर्गति बहुरि व्यापहिं बहु विधि रोग।। ४।।

शरणागत तुम्हार जग जेऊ। औरन्ह शरण देत शुभ तेऊ॥
धरि-धरि रूप अनेक प्रकारा। जेहि विधि करेहु असुर संहारा॥
तुम्हहिं छाँड़ि सो करइ को माता। देवि अंबिका जग विख्याता॥
विद्या सकल शास्त्र श्रुति चारी। गावत मैया कीर्ति तुम्हारी॥

नमस्कार है। भद्रकाली ज्वालाओं के कारण विकराल प्रतीत होने वाला, अत्यन्त भयंकर और समस्त असुरों का संहार करने वाला तुम्हारा त्रिशूल भय से हमें बचाये। तुम्हें नमस्कार है। देवि जो अपनी ध्वनि से सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करके दैत्यों के तेज नष्ट किये देता है, वह तुम्हारा घण्टा, हम लोगों की पापों से उसी प्रकार रक्षा करे, जैसे माता अपने पुत्रों की बुरे कर्मों से रक्षा करती है। चण्डिके तुम्हारे हाथों में सुशोभित खड्ग, जो असुरों के रक्त और चर्बी से चर्चित है, हमारा मंगल करे। हम तुम्हें नमस्कार करते हैं।

देवि तुम प्रसन्न होने पर सब रोगों को नष्ट कर देती हो और कुपित होने पर मनोवांछित सभी कामनाओं का नाश कर देती हो। जो लोग तुम्हारी शरण में जा चुके हैं,उन पर विपत्ति तो आती ही नहीं। ४। तुम्हारी शरण में गये हुए मनुष्य दूसरों को शरण देने वाले हो जाते हैं। देवि अम्बिके तुमने अपने स्वरूप को अनेक भागों में विभक्त करके नाना प्रकार के रूपों से जो इस समय धर्मद्रोही महादैत्यों का संहार किया है, वह सब दूसरा कौन कर सकता था? विद्याओं में, ज्ञान को प्रकाशित करने वाले शास्त्रों में तथा आदि वाक्यों वेदों में तुम्हारे सिवा और किसका वर्णन है? तथा तुमको छोड़कर दूसरी कौन ऐसी शक्ति है,जो इस विश्व को अज्ञानमय घोर अन्धकार से परिपूर्ण ममता रूपी गढ़े में निरन्तर भटका रही हो।



ममता गर्त्त जगहिं भटकावै। तुम्हहिं छाँड़ि को सबहिं नचावै॥
जहँ राक्षस विषधर रिपु घोरा। दस्यु प्रचंड अग्नि चहुँ ओरा॥
सिंधु अगाध सलिल महुँ जाई। रक्षा करहु जगत की माई॥
विश्वेश्वरि पालहु जग सारा। विश्वरूपिणी सकल पसारा॥
धारहु मातु विश्व मन मानी। वंदहिं विश्वनाथ गुण खानी॥
तव पद पदुम भाल जे नावैं। ते आश्रय दाता पद पावैं॥
जेहि विधि कीन्हि मोरि रखवाली। मारे अमित असुर बल शाली॥

दोहा- अब प्रसन्न ह्वै मो पर रिपु भय भूरि भगाय।
जग अघ अघज उपद्रव नाशहु माँ हरषाय॥ ५॥

जग दुख दूरि करहु जगदंबा। प्रणतन्ह पर प्रसन्न ह्वै अंबा॥
दीन दुखी दुर्बल जग बासी। अब वरदान देहु सुख रासी॥
सुनि बोलीं भगवती सुजाना। चाहहुँ तुम्हहिं देन वरदाना॥
माँगहु जो मन रचा विचारी। देहुँ अवसि सब जग हितकारी॥
बोले सुर सब असुर नशाई। जग दुख दूरि करहु अब माई॥

जहाँ राक्षस, जहाँ भयंकर विष वाले सर्प, जहाँ शत्रु, लुटेरों की सेना और जहाँ दावानल हो, वहाँ तथा समुद्र के बीच में भी साथ रहकर तुम विश्व की रक्षा करती हो। विश्वेश्वरि तुम विश्व का पालन करती हो। विश्वरूपा हो, इसलिये सम्पूर्ण विश्व को धारण करती हो। तुम भगवान् विश्वनाथ की भी वन्दनीया हो। जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारे सामने मस्तक झुकाते हैं, वे सम्पूर्ण विश्व को आश्रय देने वाले होते हैं। देवि प्रसन्न होओ। जैसे इस समय असुरों का वध करके तुमने शीघ्र ही हमारी रक्षा की है, उसी प्रकार सदा हमें शत्रुओं के भय से बचाओ। सम्पूर्ण जगत् का पाप नष्ट कर दो और उत्पात एवं पापों के फलस्वरूप प्राप्त होने वाले महामारी आदि बड़े-बड़े उपद्रवों को शीघ्र दूर करो। ५।

विश्व की पीड़ा दूर करने वाली देवि हम तुम्हारे चरणों पर पड़े हुए हैं, हम पर प्रसन्न होओ। त्रिलोक निवासियों की पूजनीया परमेश्वरि सब लोगों को वरदान दो।

देवी बोलीं-देवताओ मैं वर देने को तैयार हूँ। तुम्हारे मन में जिसकी इच्छा हो, वह वर माँग लो। संसार के लिये उस उपकारक वर को मैं अवश्य दूँगी।

देवता बोले-सर्वेश्वरि तुम इसी प्रकार तीनों लोकों की समस्त बाधाओं को शान्त करो और हमारे शत्रुओं का नाश करती रहो।



सुनि बोलीं भगवती भवानी। सुर गण सुनहु रहसमय वानी॥
वैवस्वत मन्वंतर माहीं। अष्टाविंशति युग भ्रम नाहीं॥
शुंभ-निशुंभ दैत्य बलवाना। प्रकटहिं जग अज्ञान निधाना॥
तब मैं नंद गोप गृह जाई। प्रकटब जसुदा गरभ समाई॥

दोहा- द्वापर युग महँ धरहिं जब कृष्ण चंद्र अवतार।
सुर कारज सारन कहँ प्रकटब बिनहिं विचार।। ६।।

विंध्याचल होइहि मम बासा। तहँ बसि करब असुर युग नासा॥
पुनि धरि रौद्र रूप जग अइहौं। वैप्रचित्त दानवन्ह नशइहौं॥
तिन्ह कर भक्षण करत होहि मम। दशन्ह अरुण दाड़िम कुसुमोपम॥
तब सुर स्वर्ग जे नर भुवि होहीं। कहिहहिं रक्त दंतिका मोहीं॥
जब शत वरष वृष्टि नहिं होई। जल विहीन जीवन कस कोई॥
करिहहिं मुनि स्तवन अनूपा। तब प्रकटब अयोनिजा रूपा॥
शत नयनन्ह मुनि देखब सोई। तब मम नाम शताक्षी होई॥
मम तनु प्रकटइ शाक घनेरा। पोषण तेहि सन सब जग केरा॥

देवी बोलीं-देवताओं वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाईसवें युग में शुम्भ और निशुम्भ नाम के दो अन्य महादैत्य उत्पन्न होंगे। तब मैं नन्दगोप के घर में उनकी पत्नी यशोदा के गर्भ से अवतीर्ण हो विन्ध्याचल में जाकर रहूँगी। ६। उक्त दोनों असुरों का नाश करूँगी। फिर अत्यन्त भयंकर रूप से पृथ्वी पर अवतार ले मैं वैप्रचित्त नाम वाले दानवों का वध करूँगी। उन भयंकर महादैत्यों को भक्षण करते समय मेरे दाँत अनार के फूल की भाँति लाल हो जायेंगे। तब स्वर्ग में देवता और मर्त्यलोक में मनुष्य सदा मेरी स्तुति करते हुए मुझे रक्तदन्तिका कहेंगे, फिर जब पृथ्वी पर सौ वर्षों के लिये वर्षा रुक जायगी और पानी का अभाव हो जायगा, उस समय मुनियों के स्तवन करने पर मैं पृथ्वी पर आयोनिजा रूप में प्रकट होऊँगी। और सौ नेत्रों से मुनियों को देखूँगी। अतः मनुष्य शताक्षी इस नाम से मेरा कीर्तन करेंगे। देवताओं उस समय मैं अपने शरीर से उत्पन्न हुए शाकों द्वारा समस्त संसार का भरण-पोषण करूँगी। जब तक वर्षा नहीं होगी, तब तक वे शाक ही सबके प्राणों की रक्षा करेंगे। ऐसा करने के कारण पृथ्वी पर शाकम्भरी के नाम से मेरी ख्याति होगी। उसी अवतार में मैं दुर्गम नामक महादैत्य का वध भी करूँगी, उस समय सब मुनि भक्ति से नतमस्तक होकर मेरी स्तुति करेंगे। तब मेरा नाम भीमा देवी के रूप में विख्यात होगा। जब अरुण नामक दैत्य



जब लौं रहिहि धरा सुखानी । करिहहुँ एहि विधि पोषित प्रानी ॥
तेहि सन शाकम्भरी कहइहौं । दुर्गम दैत्य बधे पुनि पैहौं ॥
दुर्गा देवि नाम विख्याता । भीम रूप धरिहउँ मुनि त्राता ॥
भक्षण करब राक्षसन्ह जाई । हिम गिरि वसहिं मुनिन्ह दुखदाई ॥
तब स्तुति करिहहिं मुनि मोरी । भीमादेवी कहहिं बहोरी ॥
अरुण असुर करिहहिं उत्पाता । भ्रमर रूप धरिहहुँ विख्याता ॥

दोहा- तेहि के वध सों भ्रामरी होइहि नाम हमार।
दुखद दानवन्ह दलन्ह को धरब विविध अवतार।। ७।।

ग्यारहवाँ अध्याय संपूर्ण





तीनों लोकों में भारी उपद्रव मचायेगा। तब मैं तीनों लोकों का हित करने के लिये छः पैरों वाले असंख्य भ्रमरों का रूप धारण करके उस महादैत्य का वध करूँगी। उस समय सब लोग भ्रामरी के नाम से चारों ओर मेरी स्तुति करेंगे। इस प्रकार जब-जब संसार में दानवी बाधा उपस्थित होगी, तब-तब अवतार लेकर मैं शत्रुओं का संहार करूँगी। ७।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में देवी स्तुति नामक ग्यारहवाँ अध्याय पूरा हुआ।







बारहवाँ अध्याय

दोहा- देव्युवाच सनेहवश सुर सुनिये धरि ध्यान।
जे जन प्रतिदिन भक्ति सों करहिं ये स्तुति गान।।

तिन्ह की बाधा हरब हमेशा। निश्चय मोर न नेक अँदेशा॥
मधु कैटभ विनाश की लीला। जेहि विधि वध्यौ महिष बलशीला॥
शुंभ निशुंभ असुर संहारा। जेहि विधि कीन्ह सो पढ़हिं उदारा॥
करहिं पाठ प्रति दिवस अभंगा। दैत्य दलन कर सुखद प्रसंगा॥
तिथि नवमी अष्टमी चतुर्दश। पढ़हिं सुनहिं माहात्म्य भक्तिवश॥
तिन्ह कहुँ अघ न सतावै काऊ। स्वजन वियोग दरिद्र प्रभाऊ॥
वारि अगिनि अरि दस्यु नृपाला। शस्त्र भीति नाशहि तत्काला॥
पढ़ै सुनै जो जन धरि ध्याना। तेहि कर होहि परम कल्याना॥
नशै महामारी उत्पाता। सब प्रकार सुख शांति प्रदाता॥
प्रतिदिन पाठ होइ जेहि ठाऊँ। सविधि बसहुँ तहँ छाँड़ि न जाऊँ॥

देवी बोलीं-देवताओं जो एकाग्रचित्त होकर प्रतिदिन इन स्तुतियों से मेरा स्तवन करेगा, उसकी सारी बाधा मैं निश्चय ही दूर कर दूँगी। जो मधुकैटभ का नाश, महिषासुर का वध तथा शुम्भ-निशुम्भ के संहार के प्रसंग का पाठ करेंगे तथा अष्टमी, चतुर्दशी और नवमी को भी जो एकाग्रचित्त हो भक्तिपूर्वक मेरे उत्तम माहात्म्य का श्रवण करेंगे। उन्हें कोई पाप नहीं छू सकेगा। उन पर पाप जनित आपत्तियाँ भी नहीं आयेंगी। उनके घर में कभी दरिद्रता नहीं होगी तथा उनको कभी प्रेमी जनों के विछोह का कष्ट भी नहीं भोगना पड़ेगा। इतना ही नहीं, उन्हें शत्रु से, लुटेरों से, राजा से, शस्त्र से, अग्नि से तथा जल की राशि से भी कभी भय नहीं होगा। इसलिये सबको एकाग्रचित्त होकर भक्तिपूर्वक मेरे इस माहात्म्य को सदा पढ़ना और सुनना चाहिये। यह परम कल्याणकारक है। मेरा माहात्म्य महामारी जनित समस्त उपद्रवों तथा आध्यात्मिक आदि तीनों प्रकार के उत्पातों को शान्त करने वाला है। मेरे जिस मन्दिर में प्रतिदिन विधिपूर्वक मेरे इस माहात्म्य का पाठ किया जाता है, उस स्थान को मैं कभी नहीं छोड़ती। वहाँ सदा ही मेरा सन्निधान बना रहता है। बलिदान, पूजा, होम तथा महोत्सव के अवसरों पर मेरे इस चरित्र का पूरा-पूरा पाठ और श्रवण करना चाहिये। ऐसा करने पर मनुष्य विधि को जानकर या बिना जाने भी मेरे लिये जो बलि, पूजा या होम आदि



पूजा हवन तथा बलिदाना। सकल सुअवसर सहित विधाना॥
सुनहिं पाठ मम भक्ति समेता। अविधि सविधि तहँ बसहुँ निकेता॥
पूजा हवन तथा बलि काऊ। ग्रहण करब सब सहज स्वभाऊ॥
दोहा- शरद सुअवसर वार्षिक पूजा होहि महान।
सुनत विगत बाधा सकल सुत सुख सँग धन-धान।।१।।
यह शुभ वचन मृषा नहिं होई। मम महात्म्य सुनि निर्भय सोई॥
प्रादुर्भाव मोर रणरंगा। सुनहि पराक्रम कथा प्रसंगा॥
मम माहात्म्य सुने रिपु नाशा। कुलानंद कल्याण प्रकाशा॥
शांति हेतु यह सुनै हमेशा। ग्रहज व्याधि दुःस्वप्न विशेषा॥
सकल विघ्न व्यापहिं नहिं ताही। ग्रह पीड़ा नाशइ मन चाही॥
दुःस्वप्नन्ह कर सुखद प्रभाऊ। बाल ग्रहन्ह कर व्याधि न काऊ॥
जन संगठन भेद जौं होई। सुहृद भाव बिलसै सब कोई॥
जे खल दुराचार रत पापी। ते बल हीन होत संतापी॥
दोहा-जे पर दुख देखत हँसहिं सुख देखत सकुचाहिं।
तिन्ह कहुँ सुलभ न कबहुँ सुख शिर धुनि धुनि पछिताहिं।।२।।

करेगा, उसे मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वीकार करूँगी। शरत्काल में जो वार्षिक महापूजा की जाती है, उस अवसर पर मेरे इस माहात्म्य को भक्तिपर्वूक सुनेगा, वह मनुष्य मेरे प्रसाद से सब बाधाओं से मुक्त तथा धन, धान्य एवं पुत्र से सम्पन्न होगा। १। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। मेरे इस माहात्म्य, मेरे प्रादुर्भाव की सुन्दर कथाएँ तथा युद्ध में किये हुए मेरे पराक्रम सुनने से मनुष्य निर्भय हो जाता है। मेरे माहात्म्य का श्रवण करने वाले पुरुषों के शत्रु नष्ट हो जाते हैं, उन्हें कल्याण की प्राप्ति होती तथा उनका कुल आनन्दित रहता है। सर्वत्र शान्ति-कर्म में, बुरे स्वप्न दिखायी देने पर तथा ग्रहजनित भयंकर पीड़ा उपस्थित होने पर मेरा माहात्म्य श्रवण करना चाहिये। इससे सब विघ्न तथा भयंकर ग्रह-पीड़ाएँ शान्त हो जाती हैं और मनुष्यों द्वारा देखा हुआ दुःस्वप्न शुभ स्वप्न में परिवर्तित हो जाता है। बालग्रहों से आक्रान्त हुए बालकों के लिये यह माहात्म्य शान्तिकारक है तथा मनुष्यों के संगठन में फूट होने पर यह अच्छी प्रकार मित्रता कराने वाला होता है। यह माहात्म्य समस्त दुराचारियों के बल का नाश कराने वाला है। २। इसके पाठ मात्र से राक्षसों, भूतों और पिशाचों का नाश हो जाता है। मेरा यह सब माहात्म्य मेरे सामीप्य की प्राप्ति कराने वाला है। पशु, पुष्प, अर्घ्य, धूप, दीप, गन्ध आदि उत्तम सामग्रियों द्वारा पूजन करने से, ब्राह्मणों को भोजन कराने



राक्षस भूत पिशाच विनाशा। मम समीप नर पावहिं बासा॥
पशु पुष्पार्घ्य दीप अरु धूपा । विविध गंध सब द्रव्य अनूपा॥
विप्र भोज प्रतिदिन अभिषेका । हवन दान नैवेद्य अनेका॥
अस भरि वरष करहि सेवकाई । तहू होत नहिं तस सुखदाई॥
जस यह उत्तम चरित सुहावन। सुनत सुखद सब जन मन भावन॥
पापिन्ह कर नाशहि यह पापा । तन निरोग अस अमित प्रतापा॥
प्रादुर्भाव मोर जे गावहिं । भूत समस्त न ताहि सतावहिं॥
मम रण विषयक चरित सुहावा। दलइ दुष्ट दैत्यन्ह मन भावा॥
सुनहिं जे नर न होइ रिपु भीती । स्वजनन्ह सन पावहिं अति प्रीती॥

दोहा- सुनहु देव ब्रह्मर्षि विधि कीन्हि जे स्तुति मोरि।
ते कल्याणमयी सकल बुद्धि देहिं बरजोरि।। ३।।

बन मग निर्जन थल दावानल। दस्यु दाब रिपु भीति प्रबल खल॥
गज जंगली व्याघ्र केहरि वन । कुपित नृपाल करइ वध बंधन॥
महासिंधु महुँ नाव सवारी। डगमग डोलहिं महाबयारी॥

से, होम करने से, प्रतिदिन अभिषेक करने से, नाना प्रकार के अन्य भोगों का अर्पण करने से तथा दान देने आदि से एक वर्ष तक जो मेरी आराधना की जाती है और उससे मुझे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी प्रसन्नता मेरे इस उत्तम चरित्र का एक बार श्रवण करने मात्र से हो जाती है। यह माहात्म्य श्रवण करने पर पापों को हर लेता और आरोग्य प्रदान करता है। मेरे प्रादुर्भाव का कीर्तन समस्त भूतों से रक्षा करता है तथा मेरा युद्धविषयक चरित्र दुष्ट दैत्यों का संहार करने वाला है। इसके श्रवण करने पर मनुष्यों को शत्रु का भय नहीं रहता। देवताओं तुमने और ब्रह्मर्षियों ने जो मेरी स्तुतियाँ की हैं। तथा ब्रह्माजी ने स्तुतियाँ की हैं, वे सभी कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। ३। वन में, सूने मार्ग में अथवा दावानल से घिर जाने पर। निर्जन स्थान में, लुटेरों के दाब में पड़ जाने पर या शत्रुओं से पकड़े जाने पर अथवा जंगल में सिंह, व्याघ्र या जंगली हाथियों के पीछा करने पर। कुपित राजा के आदेश से वध या बन्धन के स्थान में ले जाये जाने पर अथवा महासागर में नाव पर बैठने के बाद भारी तूफान से नाव के डगमग होने पर और अत्यन्त भयंकर युद्ध में शस्त्रों का प्रहार होने पर अथवा वेदना से पीड़ित होने पर, किं बहुना, सभी भयानक बाधाओं के उपस्थित होने पर। जो मेरे इस चरित्र का स्मरण करता है, वह मनुष्य संकट से मुक्त हो जाता है। मेरे प्रभाव से



शस्त्र प्रहार पाइ रण घोरा । बढ़ी वेदना तन सब ओरा ॥
एहि विधि बाधा देखि विशाला । मम चरित्र सुमिरै तत्काला ॥
संकट मुक्त तुरत नर होई । मम प्रभाव जग जानहि जोई ॥
सिंह आदि जे हिंसक प्रानी । दस्यु शत्रु सब घातक जानी ॥
करहिं पलायन मम गुन गाए । ऋषिरुवाच पुनि वचन सुहाए।
चंडविक्रमा मातु चंडिका । अंतर्ध्यानहिं गईं अंबिका ॥

दोहा- **सुर समस्त देखत रहे विदा कीन्ह शिर नाइ।**
जय जय जय जगदंब की हरष न हृदय समाइ।। ४।।

सुर ठाढ़े देखत सब भाँती । निर्भय भए विगत आराती ॥
पुनि सब सुर भोगत मख भागा । निरत स्वधर्म सहित अनुरागा ॥
असुर समूह गयउ पाताला । शुंभ निशुंभ हीन बेहाला ॥
जदपि भुआल नित्य जगदंबा । पुनि-पुनि प्रकटहिं जग अवलंबा ॥
जगत सृजहिं मोहहिं जग माता। सोइ विज्ञान समृद्धि प्रदाता ॥
धरहिं महामारी कर रूपा । महाप्रलय महुँ जानिअ भूपा ॥

सिंह आदि हिंसक जन्तु नष्ट हो जाते हैं तथा लुटेरे और शत्रु सभी मेरे चरित्र का स्मरण करने वाले पुरुष से दूर भागते हैं।

ऋषि कहते हैं-यों कहकर प्रचण्ड पराक्रमवाली भगवती चण्डिका सब देवताओं के देखते-देखते वहीं अन्तर्ध्यान हो गयीं। ४। फिर समस्त देवता भी शत्रुओं के मारे जाने से निर्भय हो पहले की ही भाँति यज्ञ भाग का उपभोग करते हुए अपने-अपने अधिकार का पालन करने लगे। संसार का विध्वंस करने वाले महाभयंकर अतुलपराक्रमी देवशत्रु शुम्भ तथा महाबली निशुम्भ के युद्ध में देवी द्वारा मारे जाने पर शेष दैत्य पाताल लोक में चले आये। राजन् इस प्रकार भगवती अम्बिका देवी नित्य होती हुई भी पुनः पुनः प्रकट होकर जगत् की रक्षा करती हैं। वे ही इस विश्व को मोहित करतीं, वे ही जगत् को जन्म देतीं तथा वे ही प्रार्थना करने पर संतुष्ट हो विज्ञान एवं समृद्धि प्रदान करती हैं। राजन् महा प्रलय के समय महामारी का स्वरूप धारण करने वाली वे महाकाली ही इस समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। वे ही समय-समय पर महामारी होती और वे ही स्वयं अजन्मा होती हुई भी सृष्टि के रूप में प्रकट होती हैं। वे सनातनी देवी ही समयानुसार सम्पूर्ण भूतों की रक्षा करती हैं। मनुष्यों के अभ्युदय के समय वे ही घर में लक्ष्मी के रूप में स्थित हो उन्नति प्रदान करती हैं और वे ही



त्रिभुवन महाकालिका माता। स्वयं व्याप्त ते सृष्टि विधाता॥
रक्षा करहिं भूत सब जाए। श्री सनातनी समय सुहाए॥
सोइ अभाव महँ सकल उदासै। धरि दारिद्र्य स्वरूप विनाशै॥

दोहा- गंध पुष्प धूपादि दै स्तुति पूजन सों तात।
सुत धार्मिक धी सद्गति देहिं कृपा करि मात।। ५।।

बारहवाँ अध्याय संपूर्ण



अभाव के समय दरिद्रता बनकर विनाश का कारण होती हैं।

पुष्प, धूप और गन्ध आदि से पूजन करके उनकी स्तुति करने पर वे धन, पुत्र, धार्मिक बुद्धि तथा उत्तम गति प्रदान करती हैं। ५।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में फलस्तुति नामक बारहवाँ अध्याय पूरा हुआ।







तेरहवाँ अध्याय

दो- ऋषिरुवाच राजन सुनहु एहि विधि सब जग मात।
धारहिं पालहिं जगत कहुँ वर्णेउँ सो सब तात॥

जानहु तिन्ह कर प्रकट प्रभाऊ। विद्या सकल सृजहिं कहुँ काऊ॥
विष्णु मायया मोहित सारे। तुम्हहुँ भूप ये वैश्य विचारे॥
सकल विवेकी नर जे जाने। मोहित फिरहिं ते जगत भुलाने॥
औरहु जे न आज अनुरागे। ते मोहित होइहैं पुनि आगे॥
महाराज आराधहु जाई। परमेश्वरी शरण मन लाई॥
भोग स्वर्ग सद्गति नर पावहिं। जे जगदंब चरण मन लावहिं॥
पुनि मृकंडु सुत वचन बनाई। बोले सुनहु सो मन मति लाई॥
सुनि मेधा मुनि कर उपदेशा। राजा सुरथ कृतज्ञ विशेषा॥
कीन्ह प्रनाम ऋषिहिं शिरुनाई। उत्तम व्रती सहज ऋषिराई॥
गये राज्य व्याकुल भूपाला। स्वजन वियोगी बनिक बिहाला॥

ऋषि कहते हैं-राजन् इस प्रकार मैंने तुमसे देवी के उत्तम माहात्म्य का वर्णन किया। जो इस जगत् को धारण करती हैं, उन देवी का ऐसा ही प्रभाव है। वे ही विद्या ज्ञान उत्पन्न करती हैं। भगवान् विष्णु की माया स्वरूपा उन भगवती के द्वारा ही तुम, ये वैश्य तथा अन्यान्य विवेकी जन मोहित होते हैं, मोहित हुए हैं तथा आगे भी मोहित होंगे। महाराज तुम उन्हीं परमेश्वरी की शरण में जाओ। आराधना करने पर वे ही मनुष्यों को भोग, स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करती हैं।

मार्कण्डेयजी कहते हैं-क्रौष्टुकिजी मेधामुनि के ये वचन सुनकर राजा सुरथ ने उत्तम व्रत का पालन करने वाले उन महाभाग महर्षि को प्रणाम किया। वे अत्यन्त ममता और राज्यापहरण से बहुत खिन्न हो चुके थे। महामुने इसलिये विरक्त होकर वे राजा तथा वैश्य तत्काल तपस्या को चले गये और वे जगदम्बा के दर्शन के लिये नदी के तट पर रहकर तपस्या करने लगे। वे उत्तम देवी सूक्त का जप करते हुए तपस्या में प्रवृत्त हुए। वे दोनों नदी के तट पर देवी की मिट्टी की मूर्ति बनाकर पुष्प, धूप और हवन आदि के द्वारा उनकी आराधना करने लगे। १। उन्होंने पहले तो आहार को धीरे-धीरे कम किया फिर बिल्कुल निराहार रहकर देवी में ही मन लगाये एकाग्रतापूर्वक उनका चिन्तन आरम्भ किया। वे दोनों



अस विचारि मुनिवर ते दोऊ। भए विरक्त जान सब कोऊ॥
जगदंबा दर्शन हित लागी। सरिता तट तप करहिं विरागी॥
देवी सूक्त जपत तप करहीं। सहित विधान ध्यान दोउ धरहीं॥

दोहा- तटिनी तट जगदंब की मृण्मय मूर्ति बनाइ।
पुष्प धूप हवनादि सों आराधहिं चितलाइ।। १।।

संयम सहित करहिं आहारा। निराहार पुनि तपहिं अपारा॥
एहि विधि देवि पदुम पद माहीं। चिन्तन लाग द्वैत मन नाहीं॥
शोणित स्वतन सौंपि बलि दीन्हीं। आराधना ससंयम कीन्हीं॥
वरष तीनि एहि भाँति बिताए। जगदंबा प्रकटीं छवि छाए॥
दर्शन दीन्ह देखि दोउ पायक। बोलीं वचन बहुत सुखदायक॥
केहि कारन मम पद अनुरागहु। जो इच्छा तुम्हारि वर माँगहु॥
भूपति वनिक न करहु सँकोचू। तुम हित कछु अदेय नहिं पोचू॥
पुनि मृकंडु सुत बोलन लागे। वचन विनीत सुधा जनु पागे॥
तब माँगेउ वर भूप सुजाना। शत्रु सैन्य संहरि बलवाना॥
पावहुँ पुनि स्वराज्य सहकोषा। अग्रिम जन्म रहइ निर्दोषा॥

अपने शरीर के रक्त से प्रोक्षित बलि देते हुए लगातार तीन वर्ष तक संयमपूर्वक आराधना करते रहे। इस पर प्रसन्न होकर जगत को धारण करने वाली चण्डिका देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर कहा।

देवी बोलीं-राजन् तथा अपने कुल को आनन्दित करने वाले वैश्य तुम लोग जिस वस्तु की अभिलाषा रखते हो, वह मुझसे माँगो। मैं संतुष्ट हूँ, अत: तुम्हें वह सब कुछ दूँगी।

मार्कण्डेयजी कहते हैं-तब राजा ने दूसरे जन्म में नष्ट न होने वाला राज्य माँगा तथा इस जन्म में भी शत्रुओं की सेना को बलपूर्वक नष्ट करके पुन: अपना राज्य प्राप्त कर लेने का वरदान माँगा। वैश्य का चित्त संसार की ओर से खिन्न एवं विरक्त हो चुका था और वे बड़े बुद्धिमान् थे, अत: उस समय उन्होंने तो ममता और अहंतारूप आसक्ति का नाश करने वाला ज्ञान माँगा।

देवी बोलीं-राजन् तुम थोड़े ही दिनों में शत्रुओं को मारकर अपना राज्य प्राप्त कर लोगे। अब वहाँ तुम्हारा राज्य स्थिर रहेगा फिर मृत्यु के पश्चात् तुम भगवान विवस्वान सूर्य के अंश से जन्म लेकर इस पृथ्वी पर सावर्णिक मनु के नाम से विख्यात होओगे। वैश्यवर्य तुमने



तहँ न राज्य छूटइ बरियाई। अस बरदान देहु मोहिं माई ॥
बनिक विरक्त सो बुद्धि निधाना । ममता अहं तजइ अस ज्ञाना ॥
देवी बोलीं सुनहु नृपाला । मिलिहहि राज्य गए कछु काला ॥
अब सुस्थिर होइहै तव राजू । शत्रु सँहारि सफल सब काजू ॥
मरणोत्तर रवि अंश अधारा । सावर्णिमनु होहु उदारा ॥
परम ख्याति होइहि जग माहीं । सत्य वचन मम संशय नाहीं ॥
सुनहु बनिक तुम जो वर माँगा । सोऊ दीन्ह सहित अनुरागा ॥
प्रथम ज्ञान पुनि सद्गति पाई । जीवन सफल होहि सुखदाई ॥
पुनि मृकंडु सुत बोले वचना। एहि विधि भई मनोहर रचना ॥

दोहा- सुनि स्तुति वरदान दै भई माँ अंतर्ध्यान।
सूर्य अंश सों सुरथ भे सावर्णिमनु मान।।

दोहा- दुर्गा सप्तशती शुभ पढ़हिं जे जन अवलंब।
ताके कारज सफल सब कृपा करहिं जगदंब।। २ ।।

तेरहवाँ अध्याय संपूर्ण



भी जिस वर को मुझसे प्राप्त करने की इच्छा की है, उसे देती हूँ। तुम्हें मोक्ष के लिये ज्ञान प्राप्त होगा।

मार्कण्डेयजी कहते हैं-इस प्रकार उन दोनों को मनोवांछित वरदान देकर तथा उनके द्वारा भक्तिपर्वूक अपनी स्तुति सुनकर देवी अम्बिका तत्काल अन्तर्ध्यान हो गयीं। इस तरह देवी से वरदान पाकर क्षत्रियों में श्रेष्ठ सुरथ सूर्य से जन्म ले सावर्णि नामक मनु होंगे।२।

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेय पुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में सुरथ और वैश्य को वरदान नामक तेरहवाँ अध्याय पूरा हुआ।





देवी सूक्त

देवी नमः नमः महादेवी। नमः शिवायै सब जग सेवी॥
प्रणवहुँ प्रकृतिहिं भद्रहिं स्वामिनि। माँ जगदंबहिं अंतर्यामिनि॥
रौद्रहिं नमन करौं शिरुनाई। नित्यहिं गौरिहिं धात्रिहिं माई॥
ज्योत्स्नामयी मातु शशि रूपा। नमः सुखायै विविध स्वरूपा॥
कल्याण्यै प्रणवउँ शिरुनाई। सिद्धि वृद्धि स्वरूप सुखदाई॥
नैर्ऋत्यै भूपन्ह श्री रूपहिं। पुनि प्रणवहुँ शिव शक्ति स्वरूपहिं॥
दुर्गा देवि संकटोद्धारिणि। सार स्वरूपा जग हितकारिणि॥
ख्याति कालिका धूम्रा माता। करहुँ प्रणाम सकल सुख दाता॥
अति सौम्यहिं रौद्रहिं शिरु नावहुँ। जगदाधार कृतिहिं पुनि ध्यावहुँ॥
सब प्राणिन्ह महुँ जो हरि माया। नमः नमः पुनि नमः सहाया॥
जो चेतना सकल जगमाहीं। नमः नमस्ते नमः सदाहीं॥
बुद्धि रूप व्यापै संसारा। नमः नमस्ते नमः उदारा॥
सब प्राणिन्ह महुँ निद्रा रूपा। नमः नमस्ते नमः अनूपा॥
क्षुधा स्वरूप सकल जग जोई। नमन त्रय स्वीकारै सोई॥
जो छाया स्वरूप जग माहीं। नमः नमः पुनि नमः सदाहीं॥
शक्ति रूप व्यापै संसारा। नमः नमः नित नमन हमारा॥
तृष्णा रूप सकल जग माता। नमः नमस्ते नमः विधाता॥
क्षांति स्वरूप सकल गुण खानी। नमः नमः नित नमः भवानी॥
जाति रूप जो जगत पसारा। नमः नमस्ते नमन हमारा॥



लज्जा रूप रही सरसाई । नमः नमः प्रणाम पुनि माई ॥
शांति स्वरूप सकल सुखधामा । नमः नमस्ते पुनः प्रणामा ॥
माँ श्रद्धा तुम्हैं शीश झुकावउँ । नमन प्रणाम करत सुख पावउँ ॥
व्यापहि जगत कांतिमय माता । नमः नमः नित नमः विधाता ॥
लक्ष्मी रूप सकल जग सोहै । नमः नमः पुनि नमः विमोहै ॥
वृत्ति रूप शोभित सुखकारी । प्रणवहुँ नवहुँ नमन महतारी ॥
स्मृति रूप कृपा मय धारा । नमः नमस्ते नमन हमारा ॥
प्रणवउँ तुम्हैं दयामय माई । नमः नमस्ते करत भलाई ॥
तुष्टि स्वरूप तोर जग जाना । नमः नमस्ते नमन विधाना ॥
मातृ रूप प्रणवहुँ सुखदायिनि । नमः नमस्ते कृपा विधायिनि ॥
भ्रांति रूप कहुँ करहुँ प्रणामा । नमः नमस्ते सब सुख धामा ॥
सकल जीवगन इंद्रिय स्वामिनि । प्रणवहुँ जग व्याप्तिहिं सुख धामिनि ॥
माँ चैतन्य रूप सुखदायिनि । नमः नमः पुनि नमः विधायिनि ॥

दोहा- इंद्र आदि सुर सेवत सफल मनोरथ जानि ।
स्तुति करत अनेक विधि मातु कृपा मय मानि ॥
सकल सुरन्ह निज भक्तन्ह दीन्हीं विपति विदार ।
बार-बार बंदउँ तिन्हैं हरहिं कलेश हमार ॥





रहस्य त्रय

दोहा- मुनि मृकंडु सुत सादर कहेहु पितामह मोहिं।
देवी चरित सुनावहु सफल मनोरथ होहिं।। १।।

सुनि विरंचि बोले हरषाई। सुनहु मुनीस चरित सुखदाई॥
प्रश्न तुम्हार जगत हितकारी। सबहिं सुखद सुंदर भय हारी॥
जगत मातु कहँ जे जन ध्यावैं। ते दुख द्वन्द्व रहित सुख पावैं॥
तिन्ह पर कृपा करहिं जगदंबा। नाशहिं सकल शोक अविलंबा॥
सप्तशती स्तुति अति पावन। पढ़े सुने समुझे मनभावन॥
सप्तशत श्लोक यहि माहीं। त्रयोदशाध्याय भ्रम नाहीं॥
प्रथम चरित कालिका भवानी। ध्यावत कृपा करहिं जन जानी॥
जे दुख दुसह सहत जग माहीं। तिन्ह कहँ यहि सम साधन नाहीं॥

दोहा- महालक्ष्मि मध्यम चरित पढ़ै जो नर धरि ध्यान।
उत्तर चरित सरस्वती देहिं सुखद वरदान।। २।।

प्रथमोध्याय शताधिक चारी। श्लोक सुखद जानहु शुभकारी॥
अध्याय त्रय मध्यम माहीं। दूसर तीसर चौथ सोहाहीं॥
ऊन सप्तति श्लोक सुजाना। जानहु मुनि द्वितीय सोपाना॥
तीसर सरसैं श्लोक चवालिस। चौथ शुभग शुचि सुखद बयालिस॥
तीसर उत्तर चरित सुहावन। नव अध्याय विराजत पावन॥
ऊन तीस शत पंचम माहीं। चतुर्विंशतिः षष्ठ सोहाहीं।।
सत्ताईस सप्तम सोपाना। श्लोक त्रिषष्ठि अष्ट महुँ माना॥
नवम माहिं एकतालिस जानी। दशम बसहिं बत्तिस गुण खानी॥
एकादश पचपन श्लोका। स्तुति पढ़त जाहिं सब शोका॥

दोहा- बारहवें अध्याय महँ एकतालिस श्लोक।
तेरह महुँ उनतीस जन ध्यावत होहिं विशोक।। ३।।



एहि विधि कुल तेरह सोपाना। पढ़े सुने समुझे सुख नाना॥
सप्त शत श्लोक अभिरामा। सप्तशती अस पावन नामा॥
नित प्रति पाठ करै मन लाई। जगदंबा पद ध्यान लगाई॥
कर गहि जल आचमन करावै। पुनि पुनि करि प्रणाम शिर नावै॥
चंदन आदि सुगंधित सेवा। भोग लगावै सादर मेवा॥
लै कपूर आरती उतारै। बार-बार पद पदुम निहारै॥
फल चढ़ाइ आचमन करावै। लै सादर तांबूल चढ़ावै॥
भक्ति भाव सब विधि आचरई। पुनि धरि शीश दंडवत करई॥

दोहा- चंडी माँ के सामने वाम भाग शुचि देश।
भक्ति लही सायुज्य अस पूजिअ महिष विशेष।।४।।

तहँ सिंहहिं दक्षिण बैठाई। विविध भाँति पूजिअ मन लाई॥
पुनि प्रार्थना करहि अस ध्यावत। थापिअ हृदय बहुत सुख पावत॥
एहि विधि चिंतन करइ हमेशा। ह्वै तन्मय आनंद विशेषा॥
जे सभक्ति पूजहिं जगदंबहिं। सब सुख पावहिं बिनहिं विलंबहिं॥
पुनि सायुज्य भक्ति कर लाहू। को सहजहिं अस करिहि निबाहू॥
जे भगवतिहिं भजहिं धरि ध्याना। तिन्ह कर होहि परम कल्याना॥
संशय रहित फिरहिं जग माहीं। तिन्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥
पूँजहिं पद पुनीत चित लाई। सदा समर्पित रहहिं अघाई॥

दोहा- भक्त वत्सला चंडिकहिं जे नर पूजत नाहिं।
तिन्ह के पुण्य विनाशहिं जगदंबा क्षण माहिं।।५।।

रहस्य त्रय संपूर्ण







आरती

ॐ जय अंबे जय जय जगदंबे जय जग जननी माँ। (हरे)
जय दुर्गे जय दुर्गति नाशिनि विपति विदारिणि माँ॥ (रे)
भाल विशाल विमोहै अरुण कपोल भरे।
शिर मणि मुकुट सुशोभित कुंतल केश धरे।ॐ
दाड़िम दशन नासिका शुक सी अरुण अधर सोहै।
मुख मुसकानि सुशोभित देखि जगत मोहै।ॐ
मृग मद भाल तिलक शुचि सोहै माँग सिंदूर भरे।
रक्त वसन तन सुमन वरन सोइ माल विशाल गरे।ॐ
चतुर्भुजी छवि शोभित नयनन्ह दया भरी।
हौं अनाथ जग जननी तौ हूँ कृपा करी।ॐ
खड्ग खपर कर सदा सुशोभित कुंडल कानन हैं।
नासाग्रे मणि मोती मातु तेरो केहरि वाहन है।ॐ
अशरण शरण चरण तव मैया अरुण वरण धारे।
नूपुर धुनि सुनि-सुनि सुर नर मुनि मोहित भै सारे।ॐ
शुंभ निशुंभ बधे बल शाली महिषासुर मारा।
चंड मुंड संहारिणि जननी शोक हरो सारा।ॐ
शोणित बीज बधे मधु कैटभ सुर दुख दुसह दरे।
जोगिनि गावैं खुशी मनावैं भैरव नृत्य करे।ॐ
तुम जग सृजहु विधात्री मैया पालहु तुम्ह कमले।
तुम्हीं शिवे संहारिणि खल दल दलन्ह दले।ॐ
घृत कपूर सों सजी आरती प्रीति सहित जे गावैं।
सब सुख संपति सफल मनोरथ शेष स्वर्ग पावैं।ॐ



श्री दुर्गा जी की आरती

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी।
तुमको निशदिन ध्यावत, हरिब्रह्मा शिवजी॥
माँग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को।
उज्ज्वल से दोउ नैना, चन्द्र बदन नीको॥
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजै।
रक्त पुष्प गलमाला, कण्ठन पर साजै॥
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी।
सुर नर मुनिजन सेवत, तिनके दुखहारी॥
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती।
कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योती॥
शुम्भ निशुम्भ बिदारे, महिषासुर घाती।
धूम्र विलोचन नैना, निशिदिन मदमाती॥
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे॥
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी।
आगम-निगम बखानी, तुम शिव पटरानी॥
चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरू।
बाजत ताल मृदंगा, अरु बाजत डमरू॥
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता।
भक्तन की दुःखहरता, सुख सम्पति करता॥
भुजा चार अति शोभित, वर मुद्रा धारी।
मन वांछित फल पावत, सेवत नर-नारी॥
कंचन थाल विराजत, अगर कपुर बाती।
श्री मालकेतु में राजत, कोटि रतन ज्योती॥
श्री अम्बे जी कीआरति, जो कोइ नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी, सुख सम्पति पावे॥



क्षमा प्रार्थना

अपराध हजारों किए हमने, दिन रात गुजार दिए हमने॥
हम दास हैं माते क्षमा कर दो, बस तेरा सहारा लिया हमने॥
जननी किस भाँति बुलाऊँ तुम्हें, नहीं ज्ञान है कैसे बिदाई करूँ॥
कर दीजै क्षमा सुत सेवक हैं, बिनु पूजा विधि सेवकाई करूँ॥
मंत्र न है न क्रिया विधि माते, सुरेश्वरि भक्ति बिना घबड़ाते॥
पूज सका जितना भी तुम्हें, उसे मान लो पूर्ण है प्रार्थना माते॥
सैकरों पापों का पापी भी जो, पद पद्म तेरे चित धारता है॥
ब्रह्मादि सुरों कि गति मिलती, जो तुम्हें जगदंब पुकारता है॥
हमने अपराध अनेक किए, फिर भी तव चरण शरण आया॥
सब भाँति दया का पात्र हूँ मैं, कर लीजै अपना मन भाया॥
अज्ञान भूल या बुद्धि भ्रांति के, कारण जो अपराध हुए॥
कर दीजै क्षमा हमें माते, कविशेष से पाप अगाध हुए॥

तुम जगन्मातु सच्चिदानंद कामेश्वरि हो वरदायिनि हो॥
स्वीकार करो पूजा माते होकर प्रसन्न सुखदायिनि हो॥
जो छिपी गुप्त से गुप्त वस्तु तुम उसकी भी रक्षा करना॥
जप करो ग्रहण सिद्धि दीजै हम पे सब भाँति कृपा करना॥

दोहा- प्रांजुल सुरभी श्याम जी कुमुद शैलजा नाम।
बार बार बिनती करहिं मातेश्वरि प्रणाम।।







श्री दुर्गा चालीसा

नमो नमो दुर्गे सुख करनी । नमो नमो अम्बे दुःख हरनी ॥
निराकार है ज्योति तुम्हारी । तिहूँ लोक फैली उजियारी ॥
शशि ललाट मुख महा विशाला । नेत्र लाल भृकुटी विकराला ॥
रूप मातु को अधिक सुहावे । दरश करत जन अति सुख पावे ॥
तुम संसार शक्ति लय कीन्हा । पालन हेतु अन्न धन दीन्हा ॥
अन्नपूर्णा हुई जग पाला । तुमहीं आदि सुन्दरी बाला ॥
प्रलयकाल सब नाशन हारी । तुम गौरी शिवशंकर प्यारी ॥
शिव योगी तुम्हरे गुण गावें । ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावें ॥
रूप सरस्वती को तुम धारा । दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन्ह उबारा ॥
धर्यो रूप नरसिंह को अम्बा । परगट भई फाड़कर खम्भा ॥
रक्षा करी प्रह्लाद बचायो । हिरण्याक्ष को स्वर्ग पठायो ॥
लक्ष्मी रूप धरो जग माहीं । श्री नारायण अंग समाहीं ॥
क्षीरसिन्धु में करत विलासा । दयासिन्धु दीजै मन आसा ॥
हिंगलाज में तुम्हीं भवानी । महिमा अमित न जात बखानी ॥
मातंगी धूमावति माता । भुवनेश्वरि बगला सुख दाता ॥
श्री भैरव तारा जग तारिणि । छिन्नभाल भव दुःख निवारिणि ॥
केहरि वाहन सोह भवानी । लांगुर वीर चलत अगवानी ॥
कर में खप्पर खड्ग विराजै । जाको देख काल डर भाजै ॥
सोहै अस्त्र और तिरशूला । जाते उठत शत्रु हिय शूला ॥
नगरकोट में तुम्हीं विराजत । तिहूँ लोक में डंका बाजत ॥
शुम्भ निशुम्भ दनुज तुम मारे । रक्तबीज शंखन संहारे ॥
महिषासुर नृप अति अभिमानी । जेहि अघ भार मही अकुलानी ॥
रूप कराल कालिका धारा । सेन सहित तुम तेहिं संहारा ॥



परी गाढ़ सन्तन पर जब जब । भई सहाय मातु तुम तब तब ॥
अमरपुरी अरु बासव लोका । तव महिमा सब रहे अशोका ॥
ज्वाला में है ज्योति तुम्हारी । तुम्हें सदा पूजैं नर-नारी ॥
प्रेम भक्ति से जो यश गावे । दुःख दारिद्र्य निकट नहिं आवे ॥
ध्यावे तुम्हें जो नर मन लाई । जन्म-मरण ताकौ छुटि जाई ॥
जोगी सुर मुनि कहत पुकारी । योग न हो बिन शक्ति तुम्हारी ॥
शंकर आश्चर्य तप कीन्हो । काम अरु क्रोध जीति सब लीन्हो ॥
निशिदिन ध्यान धरो शंकर को । काहु काल नहिं सुमिरों तुमको ॥
शक्ति रूप को मरम न पायो । शक्ति गई तब मन पछितायो ॥
शरणागत हुई कीर्ति बखानी । जय जय जय जगदम्ब भवानी ॥
भई प्रसन्न आदि जगदम्बा । दई शक्ति नहिं कीन विलम्बा ॥
मोको मातु कष्ट अति घेरो । तुम बिन कौन हरै दुःख मेरो ॥
आशा तृष्णा निपट सतावे । मोह मदादिक सब बिनशावे ॥
शत्रु नाश कीजै महरानी । सुमिरौं इकचित तुम्हें भवानी ॥
करो कृपा हे मातु दयाला । ऋद्धि-सिद्धि दै करहु निहाला ॥
जब लगि जियउँ दया फल पाऊँ । तुम्हरो यश मैं सदा सुनाऊँ ॥
दुर्गा चालीसा जो कोई गावै । सब सुख भोग परम्पद पावै ॥
देवीदास शरण निज जानी । करहु कृपा जगदम्ब भवानी ॥

श्लोक-सर्वमङ्गल माङ्गल्यै शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्रयम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥







नवरात्रि विधि

(देवी भागवत से)

जन्मेजय ने पूछा–द्विजवर नवरात्र आने पर क्या करना चाहिये ? विशेष करके शरत्काल के नवरात्र का क्या विधान है ? इसे विधिपूर्वक बताने की कृपा करें। विप्रवर आपकी बुद्धि बड़ी विलक्षण है। मुझे विस्तार के साथ यह बतलाइये कि नवरात्र–व्रत करने का क्या फल है और किस विधि का पालन करना चाहिये ?

व्यासजी बोले–राजन् कल्याणप्रद नवरात्र–व्रत के विषय में कहता हूँ, सुनो शरत्काल के नवरात्र में जैसे विशेष रूप से विधिपूर्वक भगवती की उपासना करनी चाहिये, वैसे ही वसन्त ऋतु के नवरात्र में भी प्रेमपूर्वक पूजा करनी चाहिये। सम्पूर्ण प्राणियों के लिये शरद् और वसन्त–ये दोनों ऋतुएँ **यमद्रंष्ट** नाम से कही गयी हैं। ये दोनों ऋतुएँ जगत के प्राणियों को महान् कष्टप्रद हैं। अतएव कल्याणकामी पुरुष यत्नपूर्वक दुर्गार्चन में तत्पर हो जायँ। वसन्त और शरद्–ये दोनों ही अत्यन्त भयंकर ऋतुएँ मनुष्यों को रोगी बनाने में कुशल हैं। इनके प्रभाव से बहुत–से प्राणी प्राणों से हाथ धो बैठते हैं। अतएव इन ऋतुओं के आने पर स्त्री–पुरुषों को चाहिये कि भगवती चण्डी की आराधना में संलग्न हो जायँ।

राजन् चैत्र और आश्विन के पवित्र महीनों में भक्तिपूर्वक यह पूजा होनी चाहिये। अमावस्या के दिन ही उत्तम सामग्री एकत्रित कर



लेनी चाहिये। उस दिन एक ही बार हविष्यान्न का भोजन करे। किसी समतल भूमि पर मण्डप बनवाये। मण्डप सोलह हाथ के विस्तार में बनाना चाहिये। खंभों और ध्वजाओं से मण्डप को सजाया जाय। सफेद मिट्टी और गोबर से उसे लिपवा दे। तदनन्तर मण्डप के मध्यभाग में एक स्वच्छ समतल वेदी बनानी चाहिये। वह वेदी चार हाथ लम्बी-चौड़ी और एक हाथ ऊँची हो। भगवती को पधराने के लिये वही उत्तम आसन होता है सुन्दर बंदनवार और चाँदनी से उसे सुशोभित करे। उसी रात ब्राह्मणों को आमन्त्रित करे। वे ब्राह्मण देवी के रहस्य को भली भाँति जानने वाले, सदाचारी, संयमशील तथा वेद-वेदांग के पारगामी होने चाहिये। प्रतिपदा के दिन प्रातःकाल समुद्र, नदी सरोवर, बावली, कुएँ अथवा घर पर ही सविधि स्नान करे। प्रतिदिन के प्रातःकाल के जो नियम हों, उन्हें पहले कर लें। इसके पश्चात् ब्राह्मणों का वरण करे। पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय से ब्राह्मणों की पूजा होनी चाहिये। अपनी शक्ति के अनुसार वरण में वस्त्र और भूषण आदि अर्पण करे। घर में सम्पत्ति हो तो कृपणता (कंजूसी) करना अनुचित है। संतुष्ट ब्राह्मणों द्वारा ही सम्यक् प्रकार से कार्य परिपूर्ण हो सकता है।

देवी का पाठ करने के लिये ब्राह्मणों के विषय में कहा गया है- नौ, पाँच, तीन अथवा एक ही ब्राह्मण का वरण करे किंतु वह ब्राह्मण शान्तिपूर्वक परायण करने वाला हो। वैदिक विधि से स्वस्तिवाचन करना चाहिये। वेदी पर रेशमी वस्त्र से आच्छादित सिंहासन स्थापित करे। उस पर भगवती जगदम्बा की प्रतिमा पधराये। भगवती की चार भुजाएँ हों और हाथों में आयुध विराजमान हों। भगवती रत्नमय भूषणों से सुशोभित हों। गले में मोती की माला लटक रही हो। सम्पूर्ण शुभ लक्षणों से सम्पन्न सौम्यमूर्ति वे देवी दिव्य वस्त्र पहने हों। वे कल्याणमयी भगवती सिंह पर बैठी हों और भुजाओं में शंख, चक्र, गदा एवं पद्म सुशोभित हो रहे हों। अथवा आठ भुजावाली भगवती सनातनी की भी प्रतिष्ठा करने का विधान है। भगवती की प्रतिमा के अभाव में



नवार्णमन्त्र से लिखे हुए यन्त्र को पूजा के लिये पीठ पर स्थापित कर लेना चाहिये। पास में ही कलशस्थापन कर ले। कलश को तीर्थ के पवित्र जल से भरना, उसमें सुवर्ण और पञ्चरत्न छोड़ना तथा पञ्चपल्लव रखना-ये सभी काम वेद के मन्त्रों का उच्चारण करके होने चाहिये। पास में चारों ओर पूजा की सामग्री रख ले। मंगल के लिये गीत और वाद्य भी कराना आवश्यक है। नन्दा तिथि अर्थात प्रतिपदा में हस्त नक्षत्र हो तो उस समय का पूजन उत्तम माना जाता है। राजन् पहले दिन उत्तम विधि से किया हुआ पूजन मनुष्यों की अभिलाषा पूर्ण करने वाला होता है। उपवास-व्रत, एकभुक्त-व्रत (दिन में एक बार भोजन) अथवा नक्त-व्रत (केवल रात्रि में भोजन) किसी भी एक व्रत का नियम करने के पश्चात् पूजा की व्यवस्था करनी चाहिये, फिर यों प्रार्थनायुक्त प्रतिज्ञा करे-देवी तुम जगत की माता हो। मैं उत्तम नवरात्र-व्रत करूँगा। माता तुम मेरे सभी कार्यों में सहायता करने की कृपा करो। नवरात्र-व्रत की पूर्ति के लिये अपनी शक्ति के अनुसार नियम-पालन करना आवश्यक है। तदनन्तर विधि के साथ मन्त्रोच्चारणपूर्वक पूजा करनी चाहिये। चन्दन, अगुरु, कपूर, मदार, कमल, अशोक, चम्पा, कनेर, मालती, ब्रह्मपुष्प आदि सुगन्धित फूलों तथा सुन्दर विल्वपत्रों एवं धूप-दीप से भगवती जगदम्बा की पूजा करे। अनेक प्रकार के फल भोग लगाये। अर्घ्य देना परम आवश्यक है। नारियल, नीबू, अनार, केला, नारंगी और कटहल आदि सभी फलों से देवी की अर्चना करे। राजन! फिर भक्तिपूर्वक अन्न भोग लगाना चाहिये।

हवन करने के लिये त्रिकोण कुण्ड बनाना चाहिये अथवा उत्तम वेदी भी बनायी जा सकती है, किंतु वह भी त्रिकोण ही हो। प्रतिदिन भाँति-भाँति के मनोहर द्रव्यों से प्रातः, संध्या और मध्याह्न-तीनों समय में भगवती की पूजा करे। गाकर, बजाकर और नाचकर-बड़े समारोह के साथ उत्सव मनाना चाहिये। भूमि पर सोना चाहिये। दिव्य वस्त्र, भूषण और अमृत के समान मधुर भोजनादि से कुमारी



कन्याओं की पूजा करनी चाहिये। पहले दिन एक की पूजा करे, फिर क्रमशः एक-एक बढ़ाता जाय। दूसरे दिन दो एवं तीसरे दिन तीन- इस प्रकार नवें दिन नौ कन्याओं का पूजन होना चाहिये। **अपने धन के अनुसार पूजन में खर्च करना चाहिये। राजन् शक्ति रहते हुए यज्ञ में धन की कृपणता करना अत्यन्त निषिद्ध है।** राजन् पूजा विधि में एक वर्ष की अवस्थावाली कन्या नहीं लेनी चाहिये, क्योंकि गन्ध और भोग आदि पदार्थों के स्वाद से वह बिलकुल अनभिज्ञ रहती है। कुमारी वही कहलाती है, जो कम-से-कम दो वर्ष की हो चुकी हो। तीन वर्ष की कन्या को त्रिमूर्ति और चार वर्ष की कन्या को कल्याणी कहते हैं। पाँच वर्ष वाली को रोहिणी, छः वर्ष वाली को कालिका, सात वर्ष वाली को चण्डिका, आठ वर्ष वाली को शाम्भवी, नौ वर्ष वाली को दुर्गा और दस वर्ष वाली को सुभद्रा कहा गया है। इससे ऊपर अवस्था वाली कन्या की पूजा नहीं करनी चाहिये। इन्हीं नामों से विधिपूर्वक पूजन करे। उन नवों कन्याओं के पूजन का फल भी बतलाया है। दुःख और दारिद्र्य के शमन के लिये कुमारी की पूजा करनी चाहिये। इस पूजन से शत्रु का शमन और धन, आयु एवं बल की वृद्धि होती है। भगवती त्रिमूर्ति की पूजा से त्रिवर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि मिलती है। साथ ही धन-धान्य का आगमन एवं पुत्र-पौत्रों का संवर्द्धन भी होता है। जिस राजा को विद्या, विजय, राज्य एवं सुख पाने की अभिलाषा हो, वह सम्पूर्ण कामना पूर्ण करने वाली भगवती कल्याणी की निरन्तर पूजा करे। शत्रु का शमन करने के लिये भगवती कालिका की भक्तिपूर्वक आराधना करनी चाहिये। भगवती चण्डिका की पूजा से ऐश्वर्य एवं धन की पूर्ति होती है। राजन् किसी को मोहित करने, दुःख-दारिद्र्य को हटाने तथा संग्राम में विजय पाने के लिए भगवती शाम्भवी की सदा पूजा करनी चाहिये। किसी कठिन कार्य को सिद्ध करते समय, अथवा यदि दुष्ट शत्रु का संहार करना हो तो भगवती दुर्गा की पूजा करनी चाहिये। इनकी भक्तिपूर्वक पूजा करने से पारलौकिक सुख भी सुलभ होता है।



मनोरथ की सफलता के लिये भगवती सुभद्रा की सदा उपासना होनी चाहिये। मानव रोग-नाश के लिये रोहिणी की निरन्तर पूजा करे। भक्तिभाव से सम्पन्न होकर श्रीरस्तु या श्रीयुक्त मन्त्र अथवा बीजमन्त्र से पूजा करने का विधान है।

मन्त्रार्थ इस प्रकार है-जो स्कन्द के तत्वों एवं ब्रह्मादि देवताओं की भी लीलापूर्वक रचना करती हैं, उन कुमारी देवी की पूजा करता हूँ। जो सत्त्व आदि तीनों गुणों से तीन रूप धारण करती हैं, जिनके अनेकों रूप हैं तथा जो तीनों कालों में व्याप्त हैं, उन भगवती त्रिमूर्ति की मैं पूजा करता हूँ। निरन्तर सुपूजित होने पर भक्तों का कल्याण करना जिनका स्वभाव ही है, उन सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने वाली भगवती कल्याणी की मैं पूजा करता हूँ, जो सम्पूर्ण प्राणियों के संचित बीजों का रोहण (रोपण) करती हैं, उन भगवती रोहिणी की मैं उपासना करता हूँ। कल्प के अन्त में चराचर सहित अखिल ब्रह्माण्ड को जो अपने में विलीन कर लेती हैं, उन भगवती कालिका की मैं पूजा करता हूँ। जिनका रूप अत्यन्त प्रकाशमान है, जो चण्ड एवं मुण्ड का संहार करने वाली हैं, तथा जिनकी कृपा से घोर पाप तत्काल नष्ट हो जाता है, उन भगवती चण्डिका की मैं पूजा करता हूँ। वेद जिनके स्वरूप है, वे ही वेद जिनके प्राकट्य के विषय में कारण का अभाव बतलाते हैं तथा सबको सुखी बनाना जिनका स्वाभाविक गुण है, उन भगवती शाम्भवी की मैं पूजा करता हूँ। जो भक्त को सदा संकट से बचाती हैं, दुःख दूर करने में जिनका मनोरंजन होता है तथा देवता लोग भी जिन्हें जानने में असमर्थ हैं, उन भगवती दुर्गा की मैं पूजा करता हूँ। जो सुपूजित होने पर भक्तों का कल्याण करने में सदा संलग्न रहती हैं, उन अशुभ विनाशिनी भगवती सुभद्रा की मैं पूजा करता हूँ। पण्डितजन इन्हीं मन्त्रों से कन्याओं की पूजा करें। वस्त्र, भूषण, माला और चन्दन आदि श्रेष्ठ वस्तुओं से पूजन करना चाहिये।

व्यासजी कहते हैं-जिसके शरीर में किसी अंग की कमी हो, जिसके अंग में कहीं छिद्र हो तथा जो दुर्गन्धयुक्त एवं नीच कुल में



उत्पन्न हुई हो, ऐसी कन्या को पूजा में नहीं लेना चाहिये। जन्म से अंधी, तिरछी नजर से ताकने वाली, कानी, कुरूपा, बहुत रोमवाली, रोगिणी तथा रजस्वला कन्या का पूजा में परित्याग कर दे। जो अत्यंत दुर्बल हो, जिसकी एक वर्ष के भीतर उत्पत्ति हुई हो, विधवा स्त्री से जिसका जन्म हुआ हो तथा विवाह से पहले ही माता जिसे जन्म दे चुकी हो, ऐसी कन्याएँ सम्पूर्ण पूजाओं में त्याज्य हैं किसी प्रकार के रोग से रहित, श्रेष्ठ रूपवाली सुन्दरी, छिद्ररहित तथा अपनी माता एवं पिता से उत्पन्न कन्या का ही सम्यक प्रकार से पूजन करना चाहिये। सभी कार्य की सिद्धि के लिये ब्राह्मण की कन्या, युद्ध में विजय पाने के लिये क्षत्रिय की कन्या तथा व्यापार में लाभ के लिये वैश्य अथवा शूद्र की कन्या का पूजन करना चाहिये-ऐसी मान्यता है। ब्राह्मण और क्षत्रिय ब्राह्मण की कन्या की पूजा करें। वैश्य के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य-इन तीनों वर्णों की कन्या की पूजा करने का विधान है। शूद्र के लिये चारों वर्णों की कन्याएँ पूजनीय हैं। शिल्पकर्म करने वाले मनुष्य यथायोग्य अपने-अपने वंश की कन्याओं का पूजन करें। नवरात्र विधि से भक्तिपूर्वक निरन्तर पूजा होनी चाहिये। यदि नवरात्र में प्रतिदिन पूजा करने के लिये असमर्थ हो तो अष्टमी के दिन विशेष रूप से पूजन करना परम आवश्यक है।

प्राचीन समय की बात है-दक्ष के यज्ञ को विध्वंस करने वाली भगवती भद्रकाली का अवतार अष्टमी को हुआ था। उनकी आकृति बड़ी भयंकर थी। उनके साथ करोड़ों योगिनियाँ थीं। अतएव भाँति-भाँति के उपहारों, गन्ध एवं मालाओं द्वारा अष्टमी को विशेष विधान के साथ भगवती की निरन्तर पूजा करनी चाहिये। उस दिन हविष्य-हवन, ब्राह्मण भोजन तथा फल पुष्प का उपहार-दान आदि कार्यों से भगवती जगदम्बा को प्रसन्न करे। राजन् यदि पूरे नवरात्र में उपवास-व्रत न कर सकता हो तो तीन दिन उपवास करने पर भी मनुष्य यथोक्त फल का अधिकारी हो जाता है-ऐसा कथन है। सप्तमी, अष्टमी और नवमी-इन तीन रातों में उपवास करके देवी की पूजा



करने से सभी फल प्राप्त हो जाते हैं। देवी-पूजन, हवन, कुमारी-पूजन और ब्राह्मण भोजन-इन चार कार्यों के सम्पन्न होने से सांगोपांग नवरात्र-व्रत पूरा होता है-ऐसी उक्ति है। जगत में अन्य जितने व्रत एवं विविध प्रकार के दान हैं, वे इस नवरात्र-व्रत की तुलना कदापि नहीं कर सकते क्योंकि यह व्रत धन एवं धान्य प्रदान करने वाला, सुख और संतान बढ़ाने वाला, आयु और आरोग्यवर्धक तथा स्वर्ग और मोक्ष तक देने में समर्थ है। अतएव जिसे विद्या, धन या पुत्र पाने की इच्छा हो, वह मनुष्य इस सौभाग्यदायी मंगलमय व्रत का विधिवत् अनुष्ठान करे। विद्या की अभिलाषा रखने वाले पुरुष को इस व्रत के प्रभाव से सम्पूर्ण विद्याएँ सुलभ हो जाती हैं। जिसका राज्य छिन गया हो, ऐसे नरेश को पुनः गद्दी पर बैठाने की क्षमता इस व्रत में है, यह सर्वथा सत्य है। जिन्होंने पूर्व जन्म में इस उत्तम नवरात्र का पालन नहीं किया है, वे ही दूसरे जन्म में रोगी, दरिद्र और संतानहीन होते हैं। जो स्त्री वन्ध्या, विधवा अथवा धनहीन है, उसके विषय में ऐसा अनुमान कर लेना चाहिये कि अवश्य ही इसने पूर्वजन्म में नवरात्र-व्रत नहीं किया है। जिसने जगत् में आकर उक्त नवरात्र-व्रत का पालन नहीं किया, वह कैसे धनी हो सकता है तथा कैसे उसे स्वर्ग में जाकर आनन्द भोगने की सुविधा मिल सकती है। जिसने कोमल बिल्वपत्रों में रक्तचन्दन लगाकर उनसे भवानी की पूजा की है, वही पृथ्वी पर राजा होता है। भगवती कल्याणस्वरूपिणी है। इनका कभी जन्म-मरण नहीं होता। दुःख दूर करने में ये सदा तत्पर रहती हैं। सिद्धि प्रदान करने वाली ये देवी जगत् में सबसे श्रेष्ठ हैं। जिस मनुष्य ने इनकी उपासना नहीं की, वह निश्चय ही इस जगत में दुखी, शत्रुग्रस्त एवं दरिद्र होता है। ब्रह्मा, विष्णु, शंकर सूर्य, अग्नि, वरुण, कुबेर एवं इन्द्रप्रभृति देवता बड़े हर्ष के साथ जिनका ध्यान करते हैं, उन्हीं भगवती चण्डिका को मानव क्यों नहीं भजते। मनु ने कहा है कि इनके स्वाहा अैर स्वधा-इन नामों का उच्चारण करने से देवता और पितर तृप्त हो जाते हैं। इसी से श्रेष्ठ मुनिगण सम्पूर्ण यज्ञों में हर्षपूर्वक



मन्त्रों के साथ इनका प्रयोग करते हैं। जिनकी इच्छा से ब्रह्मा इस जगत् की सृष्टि करते हैं, विष्णु अनेक अवतार धारण करके पालन करते हैं तथा शंकर संहार करने में तत्पर होते हैं, उन कल्याणदायिनी भगवती को मानव क्यों नहीं भजता? नर, नाग, पक्षी, पिशाच, राक्षस और देवता-इनमें कोई एक भी ऐसा नहीं है, जिसमें भगवती की शक्ति न हो और वह हिल डुल तक सके। घर-घर की यही स्थिति है। मंगलमयी भगवती चण्डिका सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध कर देती हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष-इन चारों फलों की अभिलाषा करने वाला कौन ऐसा पुरुष है, जो उन भगवती की उपासना न करे अथवा उनके व्रत से वंचित रह जाय? महान से महान पापी भी यदि नवरात्र-व्रत कर ले तो सम्पूर्ण पापों से उसका उद्धार हो जाता है।

प्राचीन समय की बात है-एक निर्धन वैश्य था। वह महान् दुःखी था। राजन् कोसलदेश के किसी सज्जन ने उसका विवाह भी कर दिया था। उसके बहुत-से बाल-बच्चे हो गये थे, पर उनकी क्षुधा कभी शान्त नहीं होती थी। उसके लड़के सायंकाल में किसी प्रकार कुछ भोजन पाते थे। वैश्य भी कुछ खा लेता था। भूखे रहते हुए वह सर्वदा दूसरे के कार्य में तत्पर रहता था। यों बड़ी कठिनता से कुटुम्ब का भरण-पोषण चलता था। उस वैश्य के मन में अपार चिन्ता रहती थी, परंतु वह सदा धर्म में तत्पर रहता था। उसकी इन्द्रियाँ शान्त थीं। वह बड़ा सदाचारी था। कभी झूठ नहीं बोलता था। उसके मन में क्रोध नहीं आने पाता था। वह सदा धैर्य से काम लेता। मन में अहंकार और डाह नहीं आने देता था। देवताओं, पितरों और अतिथियों की पूजा करने के पश्चात् अपने आश्रितजनों को खिलाकर तब स्वयं कुछ भोजन करता था। यह उस वैश्य के प्रतिदिन का नियम था। यों उसका समय व्यतीत हो रहा था। उत्तम गुणों के कारण उसका नाम भी सुशील रख दिया गया था। दरिद्रता से अत्यन्त घबराकर उस भूखे वैश्य ने एक शान्त स्वभाव मुनि से पूछा।

सुशील ने कहा-ब्राह्मण देवता तुम्हारी बुद्धि बड़ी विलक्षण है।



आज मुझ पर कृपा करके यह बताओ कि मेरी दरिद्रता कैसे दूर हो सकती है। मानद, मुझे धन की इच्छा नहीं है, मैं खूब सम्पन्न हो जाऊँ-यह नहीं चाहता। द्विजवर तुमसे पूछने का मेरा इतना ही अभिप्राय है कि कुटुम्ब का भरण-पोषण करने की शक्ति मुझमें आ जाय। मेरी छोटी बच्ची और बच्चे भोजन पाने के लिये सदा रोते रहते हैं। घर में इतना भी अन्न नहीं है कि मैं उन्हें एक-एक मुटठी भी दे सकूँ। रोते हुए मेरे बालक घर से निकल गये। मैंने उन्हें त्याग दिया है। अत: अब मेरे हृदय में आग-सी लगी है। परंतु धन के अभाव में मैं कर ही क्या सकता हूँ। मेरी लड़की विवाह के योग्य हो गयी है। मेरे पास धन है नहीं, मैं क्या करूँ? द्विजवर इसी से मेरा मन चिन्ता के समुद्र में गोते खा रहा है। दयानिधे तुमसे कोई बात छिपी नहीं है। विप्र अब तुम तप, दान, व्रत, मन्त्र एवं जप-कोई भी ऐसा उपाय बताओ, जिससे मैं अपने आश्रितजनों का भरण-पोषण सुचारु रूप से कर सकूँ। बस, मुझे इतना ही धन चाहिये। अधिक धन के लिये मैं प्रार्थना नहीं करता। महाभाग तुम्हारी कृपा से अब मेरा परिवार सुखी हो जाय-एतदर्थ सोच-समझकर कोई उपाय बतलाओ।

व्यास जी कहते हैं-राजेन्द्र इस प्रकार सुशील वैश्य के पूछने पर उत्तम व्रत का पालन करने वाले उस ब्राह्मण को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने वैश्य से कहा-वैश्यवर तुम अब श्रेष्ठ नवरात्र-व्रत करो। इसमें भगवती जगदम्बा की पूजा, हवन और ब्राह्मण भोजन कराना होगा। वेद का पारायण, भगवती के मन्त्र का जप और होमादि सभी कार्य होते हैं, किंतु इस समय तुम अपनी शक्ति के अनुसार करो, तुम्हारा कार्य अवश्य सिद्ध होगा। वैश्य, जगत में इससे बढ़कर दूसरा कोई व्रत नहीं है। इस परम पावन सुखदायी व्रत को नवरात्र व्रत कहते हैं। इस व्रत के सर्वदा पालन करने से ज्ञान और मोक्ष तक सुलभ हो जाते हैं, सुख और संतान की वृद्धि होती है तथा शत्रु के पैर नहीं टिक सकते। भगवान् राम राज्य से च्युत हो गये थे। उन्हें सीता का वियोग हो गया था। उस समय किष्किन्धा में उन्होंने यह व्रत किया था। उस



अवसर पर सीता के विरह से भगवान् राम अत्यंत संतप्त हो उठे थे। उन्होंने नवरात्र-व्रत करके भगवती जगदम्बा की विधिवत उपासना की थी। तब उन्हें जनकनन्दिनी सीता प्राप्त हुईं। उन्होंने विशाल समुद्र पर पुल बाँधा। महाबली रावण और कुम्भकर्ण मारे गये। रावणकुमार मेघनाद की जीवनलीला समाप्त हुई। विभीषण को उन्होंने लंका का राजा बनाया, इसके पश्चात् अयोध्या में आकर निष्कण्टक राज्य भोगा। वैश्यवर, अमित तेजस्वी भगवान् श्री राम को धरातल पर इस प्रकार की सुख-सुविधा इस नवरात्र के प्रभाव से ही सुलभ हुई थी।

व्यासजी कहते हैं-राजन्! ब्राह्मण की यह बात सुनकर उस वैश्य ने उसे अपना गुरु बना लिया साथ ही माया बीज नामक भुवनेश्वरी मन्त्र की उससे दीक्षा ले ली। फिर नवरात्र-व्रत करके संयमपूर्वक उत्तम भक्ति के साथ उसने जप आरम्भ कर दिया। अनेकों प्रकार के सामान यथाशक्ति एकत्रित करके उनसे उसने भवानी की आदरपूर्वक पूजा की। नौ वर्षों के प्रत्येक नवरात्र में भगवती के मायाबीज-मन्त्र का वह जप करता रहा। नवें वर्ष के नवरात्र में अन्तिम अष्टमी के दिन आधी रात के समय भगवती प्रकट हुईं और उन्होंने उस वैश्य को अपने दर्शन दिये। साथ ही विविध प्रकार के वर देकर उसे कृतकृत्य कर दिया।

एक बार भगवान राम और लक्ष्मण परस्पर विचार करके मौन बैठे थे। इतने में ही महाभाग नारद ऋषि आकाश से उतर आये। उस समय उनकी स्वर और ग्राम से विभूषित विशाल वीणा बज रही थी। वे रथन्तर साम को उच्च स्वर से गा रहे थे। मुनि जी भगवान राम के पास पहुँच गये। उन्हें आया देखकर अमित तेजस्वी श्रीराम उठ खड़े हुए। उन्होंने मुनि को श्रेष्ठ पवित्र आसन दिया। पाद्य और अर्घ्य की व्यवस्था की। भली भाँति पूजा करने के उपरान्त हाथ जोड़कर खड़े हो गये, फिर मुनि के आज्ञा देने पर उनके पास ही भगवान बैठ गये। उस समय छोटे भाई लक्ष्मण भी उनके पास थे। उन्हें मानसिक कष्ट तो था ही। मुनिवर नारद ने प्रीतिपूर्वक उनसे कुशल पूछी। साथ ही



कहा-राघव तुम साधारण जनों की भाँति क्यों इतने दुःखी हो? दुरात्मा रावण ने सीता को हर लिया है-यह बात तो मुझे ज्ञात है। मैं देवलोक में गया था। वहीं मुझे यह समाचार मिला। अपने मस्तक पर मँडराती हुई मृत्यु को जानने से मोहवश उसकी इस कुकार्य में प्रवृत्ति हुई है। रावण का निधन ही तुम्हारे अवतार का प्रयोजन है। इसीलिये सीता का हरण हुआ है।

जानकी पूर्व जन्म में मुनि की पुत्री थी। तप करना इसका स्वाभाविक गुण था। यह साध्वी वन में तपस्या कर रही थी। उसे रावण ने देख लिया। राघव, उस दुष्ट ने मुनिकन्या से प्रार्थना की-तुम मेरी भार्या बन जाओ। मुनि कन्या द्वारा घोर अपमानित होने पर दुरात्मा रावण ने उस तापसी को बलपूर्वक पकड़ लिया। अब तो तपस्विनी की क्रोधाग्नि भड़क उठी। मन में आया, इसके स्पर्श किये हुए शरीर को छोड़ देना ही उत्तम है। राम उसी समय उस तापसी ने रावण को शाप दिया-दुरात्मन्, तेरा संहार करने के लिये मैं धरातल पर एक उत्तम स्त्री के रूप में प्रकट होऊँगी। मेरे अवतार में माता के गर्भ से कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा। इस प्रकार कहकर उस तापसी ने शरीर त्याग दिया। वही ये सीता हैं, जो लक्ष्मी के अंश से प्रकट हुई हैं। भ्रमवश सर्प को माला समझकर अपनाने वाले व्यक्ति की भाँति अपने वंश का उच्छेद कराने के लिये ही रावण ने इनको हरा है। राघव देवताओं ने रावण-वध के लिये सनातन भगवान् श्रीहरि से प्रार्थना की थी। परिणामस्वरूप रघुकुल में तुम्हारे रूप में श्रीहरि का प्राकट्य हुआ है। महाबाहो धैर्य रखो। सदा धर्म में तत्पर रहने वाली साध्वी सीता किसी के वश में नहीं हो सकतीं। उनका मन निरन्तर तुम्हारे ध्यान में संलग्न है। सीता के पीने के लिये स्वयं इंद्र एक पात्र में रखकर कामधेनु का दूध भेजते हैं और उस अमृत के समान मधुर दूध को वे पीती हैं। कमलपत्र के समान विशाल नेत्रवाली सीता को स्वर्गीय सुरभि गौ का दुग्ध पान करने से भूख और प्यास का किंचिन्मात्र भी कष्ट नहीं है-अब स्वयं मैंने देखा है।



राघव, अब मैं रावण वध का उपाय बताता हूँ। इस आश्विन महीने में तुम श्रद्धापूर्वक नवरात्र का अनुष्ठान करने में लग जाओ। राम नवरात्र में उपवास, भगवती का आराधन तथा सविधि जप और होम सम्पूर्ण सिद्धियों का दान करने वाले हैं। बहुत पहले ब्रह्मा, विष्णु, महेश और स्वर्गवासी इन्द्र तक इस नवरात्र का अनुष्ठान कर चुके हैं राम तुम सुखपूर्वक यह पवित्र नवरात्र-व्रत करो। किसी कठिन परिस्थिति में पड़ने पर पुरुष को यह व्रत अवश्य करना चाहिये। राघव, विश्वामित्र, भृगु, वशिष्ठ और कश्यप द्वारा इस व्रत का अनुष्ठान हो चुका है-यह निश्चित बात है। अतएव राजेन्द्र, तुम रावण वध के निमित्त इस व्रत का अनुष्ठान अवश्य करो। वृत्रासुर का वध करने के लिये इन्द्र तथा त्रिपुरवध के लिये भगवान शंकर भी इस सर्वोत्कृष्ट व्रत का अनुष्ठान कर चुके हैं। महामते मधु को मारने के लिये भगवान् श्रीहरि ने सुमेरुगिरि पर यह व्रत किया था। अतएव राघव सावधानीपूर्वक विधि के साथ भी यह व्रत अवश्य करना चाहिये।

भगवान् राम ने पूछा-दयानिधे आप सर्वज्ञान सम्पन्न हैं। विधिपूर्वक यह बताने की कृपा करें कि वे कौन देवी हैं, उनका क्या प्रभाव है, वे कहाँ से अवतरित हुई हैं तथा उन्हें किस नाम से सम्बोधित किया जाता है?

नारदजी बोले-राम सुनो, वह देवी आद्याशक्ति हैं। सदा-सर्वदा विराजमान रहती हैं। उसकी कृपा से सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं। आराधना करने पर दुःखों को दूर करना उसका स्वाभाविक गुण है। रघुनन्दन ब्रह्मा प्रभृति सम्पूर्ण प्राणियों की निमित्त कारण वही हैं। उस शक्ति के बिना कोई भी हिल-डुल तक नहीं सकता। मेरे पिता ब्रह्मा सृष्टि करते हैं, विष्णु पालन करते हैं और शंकर संहार करते हैं। इनमें जो मंगलमयी शक्ति भासित होती है, वही यह देवी हैं। त्रिलोकी में जो सत्-असत् कहीं कोई भी वस्तु सत्तात्मक रूप से विराजमान है, उसकी उत्पत्ति में निमित्त कारण इस देवी के अतिरिक्त और कौन हो सकता है। जिस समय किसी की भी सत्ता नहीं थी, उस समय भी



इस प्रकृति-शक्ति देवी का परिपूर्ण विग्रह विराजमान था। इसी की शक्ति से एक पुरुष प्रकट होता है और उसके साथ यह आनन्द में निमग्न रहती हैं। यह युग के आरम्भ की बात है। उस समय यह कल्याणी निर्गुण कहलाती हैं। इसके बाद यह देवी सगुण रूप से विराजमान होकर तीनों लोकों की सृष्टि करती हैं। इसके द्वारा सर्वप्रथम ब्रह्मा आदि देवताओं का सृजन और उनमें शक्ति का आधान होता है। इस देवी के विषय में जानकारी प्राप्त हो जाने पर प्राणी जन्म-मरण रूपी संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है। इस देवी को जानना परम आवश्यक है। वेद इसके बाद प्रकट हुए हैं-अर्थात् वेदों की रचना करने का श्रेय इसी को है। ब्रह्मा आदि महानुभावों ने गुण और कर्म के भेद से इस देवी के अनन्त नाम बतलाये हैं और वैसे ही कल्पना भी की है। मैं कहाँ तक वर्णन करूँ। रघुनन्दन अ कार से क्ष कारपर्यन्त जितने वर्ण और स्वर प्रयुक्त हुए हैं, उनके द्वारा भगवती के असंख्य नामों का ही संकलन होता है।

भगवान् राम ने कहा-विप्रवर आप इस व्रत की संक्षिप्त विधि बतलाने की कृपा करें, क्योंकि अब मैं प्रीतिपूर्वक श्री देवी की उपासना करना चाहता हूँ।

श्रीनारद जी बोले-राम, समतल भूमि पर एक सिंहासन रख कर उस पर भगवती जगदम्बा को पधराओ और नौ रात तक उपवास करते हुए उनकी आराधना करो। पूजा सविधि होनी चाहिये।

राजन् मैं इस कार्य में आचार्य का काम करूँगा क्योंकि देवताओं का कार्य सिद्ध हो, इसके लिये मेरे मन में प्रबल उत्साह हो रहा है।

व्यासजी कहते हैं-परम प्रतापी भगवान् राम ने मुनिवर नारदजी के कथन को सुनकर उसे सत्य माना। एक उत्तम सिंहासन बनवाने की व्यवस्था की और उस पर कल्याणमयी भगवती जगदम्बा के विग्रह को पधराया। व्रती रहकर भगवान् ने विधि-विधान के साथ देवी-पूजन किया। उस समय आश्विन मास आ गया था। उत्तम किष्किन्धा-पर्वत पर यह व्यवस्था हुई थी। नौ दिनों तक उपवास



करते हुए भगवान् राम इस श्रेष्ठ व्रत को सम्पन्न करने में संलग्न रहे। विधिवत होम, पूजन आदि की विधि भी पूरी की गयी। नारद जी के बताये हुए इस व्रत को राम और लक्ष्मण-दोनों भाई प्रेमपूर्वक करते रहे। अष्टमी तिथि को आधी रात के समय भगवती प्रकट हुई। पूजा होने के उपरान्त भगवती सिंह पर बैठी हुई पधारीं और उन्होंने श्री राम-लक्ष्मण को दर्शन दिये। पर्वत के ऊँचे शिखर पर विराजमान होकर भगवान राम और लक्ष्मण-दोनों भाइयों के प्रति मेघ के समान गम्भीर वाणी में वे कहने लगीं। भक्ति की भावना ने भगवती को परम प्रसन्न कर दिया था।

देवी ने कहा-विशाल भुजा से शोभा पाने वाले श्री राम अब मैं तुम्हारे व्रत से अत्यन्त संतुष्ट हूँ। जो तुम्हारे मन में हो, वह अभिलषित वर मुझ से माँग लो। तुम भगवान नारायण के अंश से प्रकट हुए हो। मनु के पावन वंश में तुम्हारा अवतार हुआ है। रावण-वध के लिये देवताओं के प्रार्थना करने पर ही तुम अवतरित हुए हो। इसके पूर्व भी मत्स्यावतार धारण करके तुमने भयंकर राक्षस का संहार किया था। उस समय देवताओं का हित करने की इच्छा से तुमने वेदों की रक्षा की थी फिर कच्छप रूप से प्रकट होकर मन्दराचल को पीठ पर धारण किया। यों समुद्र का मन्थन करके देवताओं को अमृत द्वारा शक्तिसम्पन्न बनाया। राम तुम वराहरूप से भी प्रकट हो चुके हो, उस समय तुमने पृथ्वी को दाँत के अग्रभाग पर उठा रखा था। तुम्हारे हाथों हिरण्याक्ष की जीवन-लीला समाप्त हुई थी। नृसिंह रूप धारण करके तुम हिरण्यकशिपु को मार चुके हो। रघुकुल में प्रकट होने वाले श्रीराम तुमने नृसिंहावतार में प्रह्लाद की रक्षा की और हिरण्यकशिपु को मारा। प्राचीन समय में वामन का विग्रह धरकर तुमने बलि को छला। उस समय देवताओं का कार्य साधन करने वाले तुम इन्द्र के छोटे भाई होकर विराजमान थे। भगवान् विष्णु के अंश से सम्पन्न होकर जमदग्नि के पुत्र होने का अवसर तुम्हें प्राप्त हुआ। उस अवतार में उन्मत्त क्षत्रियों को मारकर तुमने पृथ्वी ब्राह्मणों को दान कर दी



थी। रघुनन्दन उसी प्रकार इस समय तुम राजा दशरथ के यहाँ पुत्र रूप से प्रकट हुए हो। तुम्हें अवतार लेने के लिये सम्पूर्ण देवताओं ने प्रार्थना की थी क्योंकि उन्हें रावण महान कष्ट दे रहा था। राजन् अत्यन्त बलशाली ये सभी वानर देवताओं के ही अंश हैं, ये तुम्हारे सहायक होंगे। इन सबमें मेरी शक्ति निहित है। अनघ तुम्हारा यह छोटा भाई लक्ष्मण शेषनाग का अवतार है। रावण के पुत्र मेघनाद को यह अवश्य मार डालेगा–इस विषय में तुम्हें कुछ भी संदेह नहीं करना चाहिये। अब तुम्हारा परम कर्तव्य है, इस वसन्त ऋतु के नवरात्र में असीम श्रद्धा के साथ उपासना में तत्पर हो जाओ। तदनन्तर पापी रावण को मार कर सुखपूर्वक राज्य भोगो। ग्यारह हजार वर्षों तक धरातल पर तुम्हारा राज्य स्थिर रहेगा। राघवेन्द्र राज्य भोगने के पश्चात् पुनः तुम अपने परमधाम को सिधारोगे।

व्यासजी कहते हैं–इस प्रकार कहकर भगवती अन्तर्ध्यान हो गयीं। भगवान राम के मन में प्रसन्नता की सीमा न रही। नवरात्र–व्रत समाप्त करके दशमी के दिन भगवान राम ने यात्रा कर दी। प्रस्थान के पूर्व विजयादशमी की पूजा का कार्य सम्पन्न किया। जानकी वल्लभ भगवान श्री राम की कीर्ति जगत्प्रसिद्ध है। वे पूर्णकाम हैं। प्रकट होकर परमशक्ति के प्रेरणा करने पर सुग्रीव के साथ श्री राम समुद्र के तट पर गये। साथ में लक्ष्मण जी थे, फिर समुद्र में पुल बाँधने की व्यवस्था कर देव–शत्रु रावण का वध किया। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक देवी के इस उत्तम चरित्र का श्रवण करता है, उसे प्रचुर भोग भोगने के पश्चात परम पद की उपलब्धि होती है।

इति संपूर्ण नवरात्र विधि









आचार्य डॉ. शेष नारायण वाजपेयी

व्याकरणाचार्य (एम. ए.),
ज्योतिषाचार्य (एम.ए.), पत्रकारिता पी.जी.डी.
एम.ए. पी-एच.डी. हिन्दी एवं
ज्योतिष काशी हिंदू विश्वविद्यालय

प्रकाशित पुस्तकें

कारगिल विजय, 'काव्य',
भक्त राज रावण 'काव्य',
भगवान परशुराम,
श्रीराम एवं रामसेतु (2115108 वर्ष प्राचीन)

शीघ्र आने वाली पुस्तकें

श्री राम रावण संवाद 'काव्य', वीरांगना द्रोपदी 'काव्य', श्री राममन्दिर आन्दोलन-'काव्य', 'मृत्यु महोत्सव', श्री रुद्राष्टाध्यायी (दोहा चौपाई हिन्दी), तुलसी साहित्य की व्याख्या और ज्योतिष, ज्योतिषायुर्वेद, भूत-प्रेत पुनर्जन्म, पूजन विधान, ज्योतिष वास्तु एवं शरीर लक्षण, नग नगीने यंत्र तंत्र ताबीज

राजेश्वरी प्रकाशन

K-71 छाछी बिल्डिंग कृष्णा नगर दिल्ली-51
011, 22002689, 09811226973
139-फूलेश्वर शिव मन्दिर के पास
कल्यानपुर कला कानपुर (उ. प्र.)